



पाश्चात्य साहित्यशास्त्र

Edited By
Dr. Vinod Kumar

Printed by
LAXMI PUBLICATIONS (P) LTD.
113, Golden House, Daryaganj,
New Delhi-110002
for
Lovely Professional University
Phagwara

(SYLLABUS)

पाठ्यक्रम

पाश्चात्य साहित्यशास्त्र

उद्देश्य

- छात्रों को साहित्य की अवधारणा से अवगत कराना।
- छात्रों को हिन्दी साहित्य के विभिन्न आलोचकों के साहित्यिक योगदान का ज्ञान देना।
- छात्रों को भारतीय एवं पाश्चात्य साहित्य का बोध कराना।

Sr. No.	Content
1	पाश्चात्य साहित्यशास्त्र: अरस्तु का अनुकरण सिद्धांत और विवेचन सिद्धांत और उसकी समीक्षा
2	पाश्चात्य साहित्यशास्त्र: अरस्तू के त्रासदी सिद्धांत का विवेचन और उसकी समीक्षा, लॉजाइनस
3	आई.ए. रिचर्ड्स का सम्प्रेषण सिद्धांत, टी.एस. इलियट का निर्वैयक्तिकता का सिद्धांत और उसकी समीक्षा
4	प्रमुख आधुनिक साहित्यवाद- स्वच्छंदतावाद और मार्क्सवाद की अवधारणा, स्वरूप और विशेषताएं और समीक्षा
5	अस्तित्ववाद, मनोविश्लेषणवाद, आधुनिकता और उत्तर-आधुनिकता की विवेचना और समीक्षा

विषय-सूची

इकाई (Units)

(CONTENTS)

पृष्ठ संख्या (Page No.)

1.	लौजाइनस की उदात्त की अवधारणा <i>Reeta Singh, Lovely Professional University</i>	1
2.	आई. ए. रिचर्ड्स का सम्प्रेषण सिद्धांत एवं टी. एस. इलियट का निर्वैयक्तिकता का सिद्धांत <i>Hardeep Kaur, Lovely Professional University</i>	8
3.	प्रमुख आधुनिक साहित्यवाद—स्वच्छंदतावाद, मार्क्सवाद <i>Vinod Kumar, Lovely Professional University</i>	15
4.	अस्तित्ववाद एवं मनोविश्लेषणवाद <i>Reeta Singh, Lovely Professional University</i>	20
5.	आधुनिकतावाद एवं उत्तर-आधुनिकतावाद <i>Hardeep Kaur, Lovely Professional University</i>	26

नोट

इकाई-1 : लौंजाइनस की उदात्त की अवधारणा

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

- 1.1 काव्य में उदात्त तत्त्व : स्वरूप विवेचन
- 1.2 उदात्त के स्रोत
- 1.3 उदात्त के बाधक तत्त्व
- 1.4 सारांश (Summary)
- 1.5 शब्दकोश (Keywords)
- 1.6 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
- 1.7 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे:

- काव्य में उदात्त तत्त्वों को जानने हेतु।
- उदात्त के बाधक तत्त्वों को जानने हेतु।
- उदात्त के स्रोतों को जानने हेतु।

प्रस्तावना (Introduction)

यूनान के साहित्य समीक्षकों में लौंजाइनस का महत्वपूर्ण स्थान है। जिसकी रचना का नाम है : **पेरिडप्सुस**। यह रचना अपनी रचना अवधि से डेढ़ हजार वर्ष बाद सर्वप्रथम सन् 1652 ई० में प्रकाशित हुई। इस निबंध का अंग्रेजी में अनुवाद जॉन हाल ने **ऑफ दि हाइट ऑफ एलक्वेन्स** (of the Hight of Eloquence) के नाम से किया था। अब तक 'पेरिडप्सुस' के अंग्रेजी में कई अनुवाद हो चुके हैं। वे अनुदित नाम हैं : **सब्लाइम, ऑन दि सब्लाइम, ऑन दि आर्ट ऑफ सब्लाइम**। इस ग्रंथ के हिंदी में भी अनुवाद हुए हैं। इन अनुवादों में डॉ० नगेंद्र और डॉ० निर्मला जैन के अनुवाद क्रमशः काव्य में उदात्त तत्त्व और 'उदात्त' के विषय में महत्वपूर्ण हैं। ये दोनों अनुवाद पेरिडप्सुस के अंग्रेजी अनुवाद 'ऑन दि सब्लाइम' पर आधारित हैं। इस रचना का तक तिहाई अंश खंडित है। इस छोटी रचना में 44 अध्याय हैं। इस रचना का प्रतिपाद्य विषय है : **अभिव्यक्ति की विशिष्टता और उत्कृष्टता**। डॉ० नगेंद्र ने 'पेरिडप्सुस' के प्रतिपाद्य विषय के दो भाग किए हैं : (1) विशेष सिद्धांत-अर्थात् उदात्त शैली का विवेचन; (2) सामान्य सिद्धांत-अर्थात् कला के आधारभूत सिद्धांतों का विवेचन।

1.1 काव्य में उदात्त तत्त्व : स्वरूप विवेचन

लौंजाइनस अभिव्यक्ति की विशिष्टता और उत्कृष्टता को उदात्त मानता है। एक अन्य स्थल पर उसने उदात्त को

ऊर्जित कला भी कहा है। क्योंकि कवि और लेखक अभिव्यक्ति की विशिष्टता और उत्कृष्टता के द्वारा ही प्रतिष्ठा और यश को प्राप्त करते हैं। उसका मानना है उदात्त भाषा, श्रोता का भावोद्भूत करती है। कविता में औदात्य का समावेश समस्त रचना विधान के द्वारा होता है। वह रचना के निर्माण कौशल, उचित अनुक्रम और वस्तु विन्यास को समस्त रचना विधान मानता है।



नोट्स

लौजाइनस अभिव्यक्ति की विशिष्टता और उत्कृष्टता को उदात्त मानता है।

यद्यपि यूनानी काव्य समीक्षा में उदात्त लौजाइनस से पूर्व ही विवेचित हो चुका था; किंतु तब उसे शिक्षा द्वारा अर्जित न मानकर, उसकी प्रवृत्ति को नैसर्गिक माना जाता था। लौजाइनस से पूर्व मान्यता थी कि प्रकृति ही ऐसी कला है, जो उसे अपनी परिधि में समेट सकती है। इतना ही नहीं प्रकृति की रचनाएँ कला के नियमों में बांधकर पूर्णतः निम्नतर हो जाती हैं; किंतु लौजाइनस का मत था। : प्रकृति की कार्यविधि नियमतः आवेग और औदार्य के विषय में उन्मुक्त और स्वतंत्र होते हुए भी मनमानी और पूर्णतः व्यवस्था विहीन नहीं है। वह मानता था कि भले ही प्रकृति सर्वथा मौलिक और प्राणभूत तत्त्व है; फिर भी व्यवस्था द्वारा उसका उपयोग किया जा सकता है।

लौजाइनस कविता की उदात्त अभिव्यक्ति के लिए ज्ञान के निर्देशों का पालन आवश्यक मानता है क्योंकि उसका मानना है कि ज्ञान के निर्देशों का सम्यक् पालन न करने से कविता में उदात्त अव्यवस्थित रूप से व्यक्त होगा, जिससे निपट वेग और ज्ञानहीन उद्धतता ही व्यक्त होगी। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि लौजाइनस उदात्त को सहज प्रतिभा तो मानता है, किंतु उसे ज्ञान के निर्देशों के द्वारा नियंत्रित भी। उसका मत है कि सौभाग्य और सद्बुद्धि एक दूसरे के पूरक हैं। वह सौभाग्य को प्रकृति और सद्बुद्धि को कला मानता है। अतः जिस प्रकार सद्बुद्धि के अभाव में सौभाग्य नष्ट हो जाता है उसी प्रकार ज्ञान के निर्देशों का समुचित पालन न होने पर उदात्त खंडित हो जाता है। वस्तुतः लौजाइनस ने उदात्त के स्वरूप निर्धारण में परंपरा से हटकर मध्य मार्ग का आश्रय लिया है, जिसके आधार पर उदात्त सहज प्रतिभा के साथ-साथ श्रमसाध्य भी है। लौजाइनस ने उदात्त के कतिपय बाधक तत्त्वों का निर्देश दिया है। वे बाधक तत्त्व हैं : **शब्दाडंबर (Tumidity)**, **वालेशता (Puerility)** और **भावाडंबर (Empty or false passion)**। यहाँ पर लौजाइनस निर्दिष्ट उदात्त के बाधक तत्त्वों का सामान्य परिचय देना समीचीन जान पड़ता है—

(i) शब्दाडंबर (Tumidity)—उसका मत था कि यद्यपि शब्दाडंबर से बचना बड़ा कठिन होता है; क्योंकि अपनी रचनाओं में उदात्त की इच्छा रखने वाले लेखक क्षीणता और शुष्कता से बचने के लिए शब्दाडंबर का आश्रय लेते हैं। फलतः कविता में मिथ्या त्रासद व्यक्त होने लगती है और कविता के भावों में मलिनता व्यक्त होने लगती है। चाहे मानवीय कार्य-व्यापारों की अनुकृति हो या साधारण तथ्य वर्णन, वह प्रत्येक परिस्थिति में शब्दाडंबर अहितकर मानता है; क्योंकि उसका मानना है कि शोध (Swelling) चाहे शरीर में हो या भाषा में, वह प्रत्येक दशा में दोष ही माना जाता है।

(ii) वालेयता (Puerility)—सामान्यतः वालेयता को वचकानापन भी कहा जाता है। वह वालेयता को उदात्त का निकृष्ट दोष मानता है। उसका मानना है कि तुच्छ पाण्डित्य प्रदर्शन और निष्प्राण वाचालता, वालेयता दोष है। जब रचनाकार, अपनी रचना को असामान्य और कृत्रिमतापूर्ण आकर्षक विस्तार देता है वहाँ वालेयता दोष उत्पन्न हो जाता है।

(iii) भावाडंबर (Empty or False passion)—भावाडंबर आवेग विषयक दोष है। लौजाइनस के अनुसार यह वह दोष है, जब रचनाकार आवश्यकता के प्रतिकूल आवेगों का प्रदर्शन करता है।

वस्तुतः लौजाइनस का मानना है कि रचनाकार की अभिव्यक्ति में नवीनता की खोज और औचित्य का निर्वहन न कर पाने की दशा में उदात्त विषयक, इन दोषों का जन्म होता है।

रिक्त स्थान भरें (Fill in the blanks) :

1. पेरिडप्सुस की एक रचना का नाम है।
2. लौजाइनस अभिव्यक्ति की और उत्कृष्टता को उदात्त मानता है।
3. सामान्यतः वालेयता को भी कहा जाता है।

1.2 उदात्त के स्रोत

वाक् प्रतिभा के आधार पर लौजाइनस ने पाँच स्रोतों का उल्लेख किया है। वे पाँच स्रोत हैं। : (1) महान धारणों की क्षमता, (2) उद्दाम और प्रेरणा प्रसूत आवेग, (3) अलंकारों की समुचित योजना, (4) उत्कृष्ट भाषा और (5) गरिमामय और ऊर्जित रचना विधान। इन पाँचों स्रोतों में से, वह आरंभिक दो स्रोतों को जन्मजात और शेष तीन स्रोतों का कलाजन्य मानता है। वस्तुतः लौजाइनस निर्दिष्ट इन स्रोतों को मूलतः उदात्त के तत्त्व भी कहा जाता है। डॉ० नगेंद्र ने जन्मजात स्रोतों को उदात्त तत्त्व और कलाजन्य स्रोतों को बहिरंग तत्त्व कहा है। वस्तुतः उदात्त के तत्त्वों का सामान्य परिचय इस प्रकार है—

(1) महान धारणाओं की क्षमता—लौजाइनस उदात्त के पाँचों तत्त्वों में, इसे प्रथम महत्वपूर्ण तत्त्व मानता है। उसने महान् धारणाओं की क्षमता को मन की ऊर्जा भी कहा है। यद्यपि वह इस तत्त्व को स्वभावजात मानता है, फिर भी उसने उदात्त अभिव्यक्ति के लिए उदात्त विचारों के पोषण की प्रेरणा दी है। क्योंकि उसका मानना है भाव स्वतः शब्दों के अभाव में भी मनुष्य की महानता को व्यक्त करते हैं। लौजाइनस ने उदात्त को महान आत्मा की प्रतिध्वनि कहा है। यही कारण है कभी-कभी मौन भी महान् और उदात्त होता है। उसने महान् धारणाओं की क्षमता के उद्गम स्रोतों का उल्लेख करते हुए लिखा है : सच्चे वाग्मी को निश्चय ही क्षुद्र और हीनतर भावों से मुक्त होना चाहिए। क्योंकि यह संभव नहीं कि जीवनभर क्षुद्र उद्देश्यों तथा विचारों में ग्रस्त व्यक्ति कोई स्तुत्य एवं अमर रचना कर सके। महान शब्द उन्हीं के मुख से निकलते हैं, जिनके विचार गंभीर और महान् हों। यही कारण है कि मनस्वियों को भव्य वाणी सहज ही प्राप्त हो जाती है।

(2) उद्दाम और प्रेरणा प्रसूत आवेग—वह उदात्त का दूसरा तत्त्व मानता है : उद्दाम और प्रेरणा प्रसूत भावों का चित्रण। यद्यपि उदात्त के इस तत्त्व की लौजाइनस कृत 'पेरिडप्सुस' निबंध में कहीं पर भी स्पष्ट चर्चा नहीं है; फिर भी इस निबंध में स्फुट रूप से सूत्रबद्ध कथनों के आधार पर, इस तत्त्व की चर्चा चलाई जा सकती है। वस्तुतः आवेग की नाना कोटियाँ हो सकती है, किंतु वह केवल उद्दाम और प्रेरणा प्रसूत आवेग को उदात्त का उद्गम मानते हैं; क्योंकि आवेग की सभी कोटियाँ उदात्त नहीं हो सकती हैं। उसने प्रेरणा प्रसूत आवेग को स्पष्ट करते हुए लिखा है: सच्चे औदात्य से हमारी आत्मा जैसे अपने-आप ही ऊपर उठकर गर्व से उच्चाकाश में विचरण करने लगती है तथा हर्ष और उल्लास से परिपूर्ण हो उठती है। इसीलिए उसका मत है : सच्चे वाग्मी को निश्चय ही क्षुद्र और हीनतर भावों से मुक्त होना चाहिए। यही कारण है कि वह महान कार्य-व्यापारों, संघर्ष से परिपूर्ण और अंतःप्रेरणा के भव्यतम क्षणों में होमर कृत 'इलियड' को श्रेष्ठ महाकाव्य मानता है।

लौजाइनस ने आवेग से संबंधित शिल्प औदात्य में योग देने वाले चार गुणों का उल्लेख किया है। वे गुण हैं :

(i) विषय चयन और संगठन, (ii) विस्तारणा, (iii) अनुकरण और (iv) बिंब।

उसका मानना है कि आवेग से संबंधित शैली के औदात्य में योग देने वाला महत्वपूर्ण गुण है: तत्त्वों का व्यवस्थित रीति से चयन और उनकी संगठित कर समग्र रूप देने की क्षमता। उसका मानना है : पहली प्रक्रिया में श्रोता विचारों के निर्वाचन के निर्वाचन के प्रति आकृष्ट होता है और दूसरी में उसके संघटन से। वह विशिष्ट आवेग के सहवर्ती प्रभावी भावों के चयन और एक संपूर्ण इकाई में निबंधन के कारण ही सैफो की अभिव्यक्ति का प्रशंसक

नोट

है। आवेग से संबंधित शैली के औदात्य में योग देने वाला दूसरा गुण विस्तारणा है। उसका मानना है कि तथ्यों एवं आवेगों की क्रमबद्ध और आलंकारिक रीति से प्रस्तुति के लिए विस्तारणा का उपयोग किया जाता है। उनका मानना है कि विस्तारणा का उपयोग साधन रूप में ही होना चाहिए। पूर्ववर्ती महाकवियों और लेखकों का अनुकरण और स्पर्धा को भी वह आवेग से संबंधित औदात्य की सिद्धि का मार्ग मानते हैं; क्योंकि उसका मानना है : **यह एक ऐसा उद्देश्य है जिनके लिए हमें निरंतर प्रयत्नशील होना चाहिए, क्योंकि बहुत से व्यक्ति दूसरे की आत्मा से इतने प्रभावित हो जाते हैं मानो उन्हें स्वयं प्रेरणा मिली हो।** इस प्रकार स्पष्ट होता है लौंजाइनस उदात्त अभिव्यंजना के लिए महापुरुषों का अनुकरण आवश्यक मानते हैं; क्योंकि उसका मानना है ... महापुरुषों हमारे सामने प्रकट होकर, हमारे उत्साह को प्रज्वलित कर किसी गूढ़ रीति से हमारे मस्तिष्क को औदात्य के उन उच्च स्तरों तक ले जाएँगे, जो हमारे भीतर बिंबित हैं। इसके अतिरिक्त लौंजाइनस बिंब को औदात्य सिद्धि में सहायक माना है, क्योंकि बिंब आवेगों को गति प्रदान करते हैं।



क्या आप जानते हैं? यूनान के साहित्य समीक्षकों में लौंजाइनस का महत्वपूर्ण स्थान है।

(3) **अलंकारों की समुचित योजना**—उदात्त अभिव्यक्ति और उत्कृष्टता के लिए लौंजाइनस ने अलंकार को प्रमुख तत्त्व माना है। उसका मानना है : यदि अलंकारों का उचित रीति से उपयोग किया जाए तो उनसे औदात्य की सिद्धि में सहायता मिलती है। उसका मानना है कि अलंकार जहाँ औदात्य के उत्कर्ष में सहायक होते हैं; वहीं वे स्वयं भी उससे बल प्राप्त करते हैं। वह उदात्त को साध्य और अलंकार को साधन मानता है। उसका मानना है कि कविता में अलंकार तभी उदात्त के उत्कर्ष में सहायक होते हैं, जब तक उदात्त में अलंकारों की प्रयुक्ति अनुभव न हो। क्योंकि उसका मानना है कि : **एक बार सौंदर्य और औदात्य के साथ संबंध हो जाने पर उनका (अलंकारों) कुशल प्रयोग करने वाली कला छिप जाती है और समस्त संभाव्य संदेह से बच जाती है।** इतना ही नहीं लौंजाइनस का मत है कि जिस प्रकार सूर्य के प्रखर आलोक में सभी मंद दीपक बुझ जाते हैं, उसी प्रकार उदात्त के सर्वव्यापी ऐश्वर्य में सिक्त होकर सभी आलंकारिक चमत्कार दृष्टि से ओझल हो जाते हैं। संभवतः यही कारण रहा होगा कि उन्होंने उन्हीं अलंकारों की चर्चा की है जो उदात्त की अभिव्यक्ति और उत्कृष्टता के उत्कर्षक होते हैं।

(4) **उत्कृष्ट भाषा**—उत्कृष्ट भाषा भी उदात्त का महत्वपूर्ण तत्त्व है। लौंजाइनस किसी भी विवेचन में विचार और पद-विन्यास को एक-दूसरे का पूरक मानते हैं; क्योंकि उसका मानना है पद-विन्यास और विचार परस्पर आश्रित रहकर ही विकसित होते हैं। जिस प्रकार विचार भाषा के बिना व्यक्त नहीं किया जा सकता है, उसी प्रकार विचारहीन भाषा भी प्रभावहीन हो जाती है। उसका मानना है कि उपयुक्त एवं प्रभावशाली शब्दावली की श्रोता को आश्चर्यजनक रूप से आकर्षित एवं अभिभूत करती है; क्योंकि इस प्रकार की भाषा ही रचना में भव्यता, सौंदर्य; मार्दव, गरिमा, ओज और शक्ति आदि गुणों का समावेश होता है। उसका मत है: **सुंदर शब्द वास्तव में विचार को विशेष प्रकार का आलोक प्रदान करते हैं। वह शब्द और वस्तु के पूर्ण सामंजस्य को ही पूर्ण अभिव्यंजना मानते हैं।** इसके अतिरिक्त लौंजाइनस ने उदात्त की सिद्धि के लिए तीन से अधिक रूपकों का एक साथ प्रयोग न करने का निर्देश दिया है। इतना ही नहीं उसका मानना है: **रूपकों के प्रयोग का उचित अवसर तब होता है, जब आवेग उन्मद प्रवाह की भांति उमड़ता चला आता है।** क्योंकि उसका मानना है कि आवेग के प्रवाह में श्रोता भी बहने लगता है और उसे प्रयुक्त रूपकों की आलोचना का अवसर नहीं मिल पाता है। लौंजाइनस साधारण वस्तुओं के चित्रण और वर्णन में भी रूपकों को आवश्यक मानता है, क्योंकि वह अलंकारमयी भाषा में स्वाभाविक शक्ति मानता है। इतना अवश्य है कि वह अलंकारों की भांति लाक्षणिक प्रयोगों को एक सीमा तक ही ग्राह्य मानता है, क्योंकि उसका मानना है कि अतिरंजनापूर्ण रूपकों की भरमार से कविता भावावेश की अंध प्रवृत्तियों की शिकार हो सकती है।

नोट

(5) गरिमामय रचना विधान—उदात्त का अंतिम तत्त्व है : गरिमामय रचना विधान। वह किसी निश्चित क्रम से शब्दों की योजना को गरिमामय रचना विधान मानता है। इसके लिए वह सामंजस्य (Hormany) को अनिवार्य मानता है। उसका मानना है : **समंजित शब्द योजना न केवल प्रत्यय और आनंद की ही उद्बुद्धि करती है वरन् उदात्त उक्ति और भावावेश का भी अद्भुत साधन है।** उसका मानना है, जिस प्रकार बांसुरी की तान और सारंगी (हार्प) का स्वर परस्पर समवाय द्वारा श्रोताओं के ऊपर जादू-सा कर देते हैं; उसी प्रकार भाषा का सामंजस्य मनुष्य दबी श्रवणेंद्रियों सहित, उसकी आत्मा को भी प्रभावित करती है। उसी प्रकार सामंजस्य द्वारा रचना की अभिव्यक्ति में विशिष्टता और उत्कृष्टता का समावेश होता है। फलतः रचना श्रोता को पूर्णतः प्रभावित करने में समर्थ होती है। लौजाइनस किसी भी उक्ति में अवस्थित औदात्य को मानव शरीर की रचना की भांति उसके विभिन्न अंगों के निवेष्टन में मानता है: पृथक्त्व में नहीं। उसी प्रकार औदात्य भी गरिमा के तत्त्वों की एकान्वित और सामंजस्य का परिणाम होता है। इसीलिए वह लेखक और कवि में स्वाभाविक औदात्य का गुण न होने पर भी सामंजस्य की कला में निपुण होने पर, उसे भी औदात्य संपन्न रचनाकारों के समकक्ष ही मानता है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. वाक् प्रतिभा के आधार पर लौजाइनस ने कितने स्रोतों का उल्लेख किया है?
(अ) 6 (ब) 7
(स) 5 (द) 8
5. लौजाइनस ने किसे महान आत्मा की प्रतिध्वनि कहा है?
(अ) उदात्त (ब) स्वभाव
(स) विचार (द) इनमें से कोई नहीं
6. उदात्त का अंतिम तत्त्व क्या है?
(अ) गरिमामय रचना विधान (ब) उत्कृष्ट भाषा
(स) अलंकारों की समुचित योजना (द) महान धारणाओं की क्षमता

1.3 उदात्त के बाधक तत्त्व

लौजाइनस ने उदात्त के साधक तत्त्वों की तरह कतिपय बाधक तत्त्वों की चर्चा की है। उनके द्वारा निर्दिष्ट उदात्त के तत्त्व हैं :

1. भाषा का अव्यवस्थित प्रवाह,
2. उक्ति की संक्षिप्तता,
3. वाग्विस्तार और
4. अभिव्यक्ति की क्षुद्रता।



टास्क काव्य के उदात्त तत्त्वों के संबंध में अपने विचार व्यक्त कीजिए।

उदात्त के बाधक, इन तत्त्वों का सामान्य परिचय दिया जा रहा है—

- (1) **भाषा का अव्यवस्थित प्रवाह**—भाषा के छिन्न-भिन्न और अव्यवस्थित प्रवाह को लौजाइनस उदात्त के लिए अत्यंत घातक मानता है। वह लघु-गुरु (15), गुरु-लघु (51) क्रम से युक्त द्विमात्रिक पदों तथा दुहरे गुरु-लघु (51) क्रम में युक्त चतुर्मात्रिक पद रचना में भाषा का अव्यवस्थित प्रवाह मानता है। उसका मानना है कि इस प्रकार भाषा, अपनी लयात्मकता, कृत्रिमता और अत्यंत सुकुमारता से संगीत के स्तर पर उतर आती है। फलतः जो अपनी चमक की एकरसता से आवेग रहित हो जाती है, जिससे रचना में औदात्य शून्यता परिलक्षित होने लगती है।
- (2) **उक्ति की संक्षिप्तता**—लौजाइनस उक्ति की संक्षिप्तता को भी औदात्य का बाधक तत्त्व मानता है; क्योंकि उसका मानना है कि इससे अर्थ संकुचित होता है और साथ ही उक्ति में विचार बाहुल्य विन्यस्त होने के कारण, उसकी गरिमा नष्ट हो जाती है।
- (3) **वाग्विस्तार**—वह उक्ति की संक्षिप्तता के समान वाग्विस्तार को भी औदात्य का बाधक मानता है; क्योंकि उसका मानना है अनावश्यक वाग्विस्तार आडंबर को जन्म देती है।
- (4) **अभिव्यक्ति की क्षुद्रता**—वह अभिव्यक्ति की क्षुद्रता से भी औदात्य की क्षति मानता है। सामान्यतः अभिव्यक्ति की क्षुद्रता का आशय है: क्षुद्र शब्दों का प्रयोग। इसीलिए वह अपने समकालीन कवि हेरोडोटस का युद्ध वर्णन को उदात्त के अनुरूप नहीं मानता क्योंकि उसमें क्षुद्र शब्दों का प्रयोग हुआ है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State whether the following statements are True or False) :

7. भाषा के छिन्न-भिन्न और अव्यवस्थित प्रवाह को लौजाइनस उदात्त के लिए अत्यंत घातक मानते हैं।
8. लौजाइनस उक्ति की संक्षिप्तता को उदात्त का अनिवार्य तत्त्व मानते हैं।
9. लौजाइनस अभिव्यक्ति की क्षुद्रता से उदात्त की क्षति मानते हैं।

1.4 सारांश (Summary)

- यूनान के साहित्य समीक्षकों में लौजाइनस का महत्वपूर्ण स्थान है। जिसकी रचना का नाम है : **पेरिडप्सुस**। यह रचना अपनी रचना अवधि से डेढ़ हजार वर्ष बाद सर्वप्रथम सन् 1652 ई० में प्रकाशित हुई।
- लौजाइनस अभिव्यक्ति की विशिष्टता और उत्कृष्टता को उदात्त मानता है। एक अन्य स्थल पर उसने उदात्त को ऊर्जित कला भी कहा है।
- लौजाइनस कविता की उदात्त अभिव्यक्ति के लिए ज्ञान के निर्देशों का पालन आवश्यक मानता है क्योंकि उसका मानना है कि ज्ञान के निर्देशों का सम्यक् पालन न करने से कविता में उदात्त अव्यवस्थित रूप से व्यक्त होगा, जिससे निपट वेग और ज्ञानहीन उद्धतता ही व्यक्त होगी। लौजाइनस ने उदात्त को महान आत्मा की प्रतिध्वनि कहा है। यही कारण है कभी-कभी मौन भी महान् और उदात्त होता है।
- लौजाइनस ने आवेग से संबंधित शिल्प औदात्य में योग देने वाले चार गुणों का उल्लेख किया है। वे गुण हैं: **(i) विषय चयन और संगठन, (ii) विस्तारणा, (iii) अनुकरण और (iv) बिंब।**
- उदात्त अभिव्यक्ति और उत्कृष्टता के लिए लौजाइनस ने अलंकार को प्रमुख तत्त्व माना है। उसका मानना है: यदि अलंकारों का उचित रीति से उपयोग किया जाए तो उनसे औदात्य की सिद्धि में सहायता मिलती है।

नोट

- लौजाइनस किसी भी विवेचन में विचार और पद-विन्यास को एक-दूसरे का पूरक मानते हैं; क्योंकि उसका मानना है कि पद-विन्यास और विचार परस्पर आश्रित रहकर ही विकसित होते हैं।

1.5 शब्दकोश (Keywords)

- प्रसूत : उत्पन्न, प्रसव-काल में होने वाला रोग
- उदात्त : ऊंचा, महान्, उदार, श्रेष्ठ, स्पष्ट

1.6 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. काव्य में उदात्त तत्त्व की विवेचना कीजिए।
2. उदात्त के विभिन्न स्रोतों का उल्लेख कीजिए।
3. उदात्त के बाधक तत्वों की विवेचना कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer : Self Assessment)

- | | | | |
|------------|--------------|-------------|----------|
| 1. लौजाइनस | 2. विशिष्टता | 3. बचकानापन | 4. (स) |
| 5. (अ) | 6. (अ) | 7. सत्य | 8. असत्य |
| 9. सत्य। | | | |

1.7 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)



पुस्तकें

1. काव्य में उदात्त तत्त्व – डॉ. नगेन्द्र।
2. पाश्चात्य समीक्षा के सिद्धांत – मैथिली प्रसाद भारद्वाज।

नोट

इकाई-2 : आई.ए. रिचर्ड्स का सम्प्रेषण सिद्धांत एवं टी.एस. इलियट का निर्वैयक्तिकता का सिद्धांत

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

- 2.1 रिचर्ड्स का सम्प्रेषण सिद्धांत
 - 2.1.1 सम्प्रेषण और काव्य-भाषा
 - 2.1.2 सम्प्रेषण सिद्धांत का महत्त्व
- 2.2 इलियट का निर्वैयक्तिकता का सिद्धांत
 - 2.2.1 निर्वैयक्तिकता सिद्धांत की समीक्षा
- 2.3 सारांश (Summary)
- 2.4 शब्दकोश (Keywords)
- 2.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
- 2.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे:

- रिचर्ड्स के सम्प्रेषण और काव्य भाषा पर अपने मत प्रस्तुत करने हेतु।
- सम्प्रेषण सिद्धांत को समझने हेतु।
- निर्वैयक्तिकता का अर्थ जानने हेतु।
- निर्वैयक्तिकता सिद्धांत की समीक्षा करने हेतु।

प्रस्तावना (Introduction)

आधुनिक युग के पाश्चात्य समीक्षकों में आई.ए. रिचर्ड्स (1893-1979 ई०) का महत्वपूर्ण स्थान है। उनका जन्म 1893 ई० में इंग्लैण्ड में हुआ। वे अर्थशास्त्र एवं मनोविज्ञान के विद्यार्थी रहे तथा हार्वर्ड विश्वविद्यालय में अंग्रेजी के प्रोफेसर रहे। वहीं से उन्होंने डी. लिट् की उपाधि प्राप्त की। उन्होंने लगभग एक दर्जन ग्रंथ लिखे जिनमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण ग्रंथ है—‘*Principles of Literary Criticism*’ अर्थात् साहित्य समीक्षा के सिद्धांत।

बीसवीं शताब्दी में पाश्चात्य समीक्षा को प्रभावित करने वाले विचारकों में टी.एस. इलियट (टॉमस स्टलर्स इलियट) का नाम अत्यंत महत्वपूर्ण है। इनका जन्म 26 सितंबर, 1888 को सेंटलुई, मिसौरी (अमरीका) में हुआ। उनकी शिक्षा पेरिस और लंदन में हुई। “सन् 1948 में उन्हें नोबल पुरस्कार प्राप्त हुआ और सन् 1965 में इनका निधन हो गया।”

नोट

इलियट ने संस्कृत और पालि भाषा में व साहित्य का अध्ययन किया। इन्हें विवादास्पद पाश्चात्य समीक्षक भी कहा जाता है, क्योंकि इनके कवि, कविता, साहित्य-समीक्षा आदि से संबंधित मत महत्वपूर्ण होने के साथ-साथ विवादास्पद भी है।

2.1 रिचर्ड्स का संप्रेषण सिद्धांत

रिचर्ड्स ने मनोविज्ञान का आधार लेकर काव्य संबंधी दो उल्लेखनीय सिद्धांत दिए जिनके नाम हैं:

1. कला का मूल्यवादी सिद्धांत या मूल्य सिद्धांत
2. संप्रेषणीयता का सिद्धांत

संप्रेषणीयता सिद्धांत—रिचर्ड्स का काव्य संबंधी दूसरा महत्वपूर्ण सिद्धांत संप्रेषणीयता का सिद्धांत है। प्रेषणीयता को स्पष्ट करते हुए रिचर्ड्स कहता है—“All that occurs is that under certain conditions separate minds have closely similar experience.” अर्थात् प्रेषणीयता में जो कुछ होता है, वह यह है कि कुछ विशेष परिस्थितियों में विभिन्न मस्तिष्क प्रायः एक जैसी अनुभूति प्राप्त करते हैं।



नोट्स

जब किसी वातावरण विशेष से एक व्यक्ति का मस्तिष्क प्रभावित होता है तथा दूसरा उस व्यक्ति की क्रिया से ऐसी अनुभूति प्राप्त करता है कि जो पहले व्यक्ति की अनुभूति के समान होती है, तो उसे प्रेषणीयता कहते हैं।

दूसरे शब्दों में, किसी अन्य की अनुभूति को अनुभूति करना ही प्रेषणीयता है।

कवि, कलाकार या सर्जक की अनुभूतियों का भावक द्वारा अनुभव किया जाना ही संप्रेषण है।

प्रेषणीयता के आधारभूत तत्वों पर विचार करते हुए रिचर्ड्स ने इसका श्रेय कवि की वर्णन क्षमता और श्रोता या बैठक की ग्रहण शक्ति को दिया है। कला के लिए प्रेषणीयता अत्यावश्यक है, किंतु क्या इसके लिए कलाकार को विशेष प्रयत्न करने चाहिए? यदि कलाकार स्वयं अपनी रचना को प्रेषणीय बनाने के लिए प्रयत्न करने लगेगा, तो संभव है कि उसकी रचना में कृत्रिमता आ जाए। इसलिए रिचर्ड्स यह मानता है कि कला में प्रेषणीयता आवश्यक है, किंतु कलाकार को उसके लिए विशेष प्रयत्न नहीं करना चाहिए। कलाकार जितना सहज स्वाभाविक रूप में अपना कार्य करेगा उसकी अनुभूतियां उतनी ही संप्रेषणीय बनेंगी।

संप्रेषण तभी पूर्णता से होता है, जब विषय रोचक एवं रमणीय होता है। कवि जब तक स्वयं अपनी अनुभूतियों के साथ एक रस नहीं हो जाता, तब तक वे अनुभूतियाँ संप्रेषणीयता का गुण ग्रहण नहीं कर सकतीं। संप्रेषण स्वाभाविक व्यापार है। उसके लिए कलाकार को न तो सजग रहने की आवश्यकता है, न प्रयत्न करने की। संप्रेषण के लिए प्रयत्न करने पर कला में कृत्रिमता का समावेश हो जाता है। निश्चय ही संप्रेषणीयता के लिए कवि प्रतिभा अज्ञात रूप से स्वतः कार्य करती है, क्योंकि अनुभूतियों का सहज प्रस्तुतीकरण उस प्रभाव दशा का निर्माण कर देता है जो कवि ने अनुभूत की थी। इससे प्रेषणीयता में पूर्णता का विधान होता है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थान भरें (Fill in the blanks) :

1. आई. ए. रिचर्ड्स का जन्म में हुआ था।
2. संप्रेषण तभी पूर्णता से होता है, जब विषय रोचक एवं होता है।
3. संप्रेषण व्यापार है।

2.1.1 सम्प्रेषण और काव्य-भाषा

नोट



क्या आप जानते हैं? काव्य में सम्प्रेषण का प्रमुख माध्यम भाषा है, जिसका प्रयोग अर्थ को सूचित करने के लिए होता है। भाषा में सामान्यतः चार बातें निहित रहती हैं—वाच्यार्थ (Sense), भाव (Feeling), वाणीगत चेष्टा (tone), अभिप्राय (intention)।

भाषा से सामान्यतः उपर्युक्त चारों प्रकार के अर्थ सूचित होते हैं, किंतु विषय एवं परिस्थिति के भेद से इनका अनुपात बदलता रहता है। विज्ञान में वाच्यार्थ का अधिक महत्त्व होगा तो काव्य में 'भाव' को अधिक महत्ता मिलेगी। कविता विचारों की अभिव्यक्ति के लिए नहीं अपितु भावों के प्रभाव के लिए होती है। काव्य में व्यक्त विचार भाव और दृष्टिकोण के निमित्त होते हैं।

अर्थ और भाव के पारस्परिक संबंध को स्पष्ट करते हुए रिचर्ड्स ने उसके तीन रूप स्वीकार किए हैं—

1. जहाँ अर्थ ही भाव का बोधक हो, 2. जहाँ अर्थ भाव की अनुभूति का सूचक हो, 3. जहाँ प्रसंग विशेष के कारण अर्थ विभिन्न भावों का सूचक हो।

काव्यास्वादन की प्रक्रिया द्वारा—काव्य प्रेषण की प्रक्रिया का विश्लेषण करते हुए रिचर्ड्स ने उसे छह भागों में विभक्त किया गया है:

1. मुद्रित शब्दों का नेत्रों के माध्यम से ग्रहण
2. नेत्रों द्वारा प्राप्त संवेदनाओं से संबंधित बिम्बों का ग्रहण
3. स्वतंत्र बिम्बों का ग्रहण
4. विभिन्न वस्तुओं का बोध
5. भाषानुभूति
6. दृष्टिकोण से सामंजस्य

सर्वप्रथम काव्य के पठन से अक्षरों, उनकी स्पष्टता, शुद्धता आदि का बोध होता है तत्पश्चात् उन अक्षरों से पाठक के मन में बिंब बनने प्रारंभ होते हैं। रिचर्ड्स ने यह भी बताया है कि किसी कविता को पढ़कर दो पाठकों के मन में एक जैसे ही बिंब उत्पन्न नहीं होंगे। संभव है सभी पाठकों के मन में अलग-अलग बिंब बनें। अतः काव्य में मूर्त विधान का बहुत अधिक महत्त्व नहीं है। डॉ. रिचर्ड्स के अनुसार मूर्त विधानजन्य अनुभूति से भी अधिक महत्वपूर्ण भाव तत्त्व है जिसके कारण विभिन्न पाठकों के अनुभव में समानता आती है। शब्दों के अर्थबोध एवं बिंब ग्रहण से हमें काव्यार्थ का बोध होता है। इस बोध से भावों एवं भावात्मक दृष्टिकोण की अनुभूति होती है। इसीलिए भावों का कला संबंधी अनुभूति में सर्वाधिक महत्त्व है। 'दृष्टिकोणों' का प्रयोग यहाँ भावना (Sentiments) के अर्थ में किया गया है जिसे भारतीय रस सिद्धांत में 'स्थायी भाव' कहा गया है। डॉ. गणपति चंद्र गुप्त के अनुसार— **“इमोशन और ‘एटीच्यूड’ के बीच रिचर्ड्स ने वही संबंध माना है जो संचारी भाव और स्थायी भाव के मध्य है।”** किंतु रिचर्ड्स एवं भारतीय आचार्यों के विचारों में पर्याप्त मतभेद है। भारतीय आचार्य काव्य का लक्ष्य रस या आनंद की निष्पत्ति मानते हैं, जबकि रिचर्ड्स इसे सर्वथा गौण मानता है। रिचर्ड्स काव्यानुभूति में भावोद्दीप्ति को लक्ष्य मानते हुए भी उसका उद्देश्य हमारे आवेगों को सुव्यवस्थित करना बताते हैं। आनंद को काव्योद्देश्य मानना उन्हें स्वीकार नहीं है।

2.1.2 सम्प्रेषण सिद्धांत का महत्त्व

1. रिचर्ड्स काव्य का मूल्यांकन रागात्मक आधार पर करते हैं और पाठकों के मन पर पड़े प्रभावों से उसे आंकते हैं।

नोट

2. रस सिद्धांत में स्थायी भाव की सत्ता 'वासना रूप में विद्यमान' भावों के रूप में की गई है, जबकि रिचर्ड्स आदिम आवेगों (Impulses) की सत्ता को स्वीकार करता है।
3. रस सिद्धांत में जहां भिन्न-भिन्न रसों की चर्चा की गई है, वहीं रिचर्ड्स ने विरोधी आवेगों को स्वीकार किया है।
4. रिचर्ड्स का संप्रेषण सिद्धांत भारतीय काव्यशास्त्र में वर्णित साधारणीकरण के समीप है।
5. रिचर्ड्स के काव्य भाषा का जो विवेचन किया है वह अत्यंत महत्वपूर्ण है। वे यह मानते हैं कि भाषा का प्रयोग भाव की प्रेरणा से होता है।
6. भाषा में लहजा (tone) विशेष महत्वपूर्ण है जिसका आधार संबंध न होकर भाव दशा है। क्रोध की दशा में हमारा 'टोन' जिस प्रकार का होता है वैसा 'प्रेम' की दशा में नहीं होता।
7. रिचर्ड्स ने भाषा के जो तीन भेदभाव, लहजा और अभिप्राय किए हैं, वे वास्तव में अर्थ के तीन भेद न होकर एक-दूसरे के अंग हैं। इनकी तुलना में भारतीय आचार्यों ने शब्द और उसकी शक्तियों के जो भेद अधिधा, लक्षणा और व्यंजना के रूप में किए वे अधिक तर्कसंगत हैं।
8. रिचर्ड्स ने भारतीय रस सिद्धांत और उससे प्राप्त होने वाले आनंद को उतना महत्व नहीं दिया। वह कहता है कि काव्य से प्राप्त होने वाला तात्कालिक आनंद सर्वथा गौण है यह मान्यता उनके प्रेषणीयता सिद्धांत के विपरीत है।
9. रिचर्ड्स की आधारभूत मान्यताएँ तो महत्वपूर्ण हैं, किंतु उनकी व्याख्या अटपटी एवं अपूर्ण है।

कुछ भी हो रिचर्ड्स ने काव्य सिद्धांतों ने अपने युग के समीक्षकों को बहुत अधिक आकर्षित किया है। उन्होंने साहित्य का एक ऐसा मानदण्ड खोजने का प्रयास किया जो भाषा विज्ञान, मनोविज्ञान एवं नीतिशास्त्र के तत्त्वों से समन्वित है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. काव्य में संप्रेषण का प्रमुख माध्यम क्या है?
(अ) भाषा (ब) भाव
(स) अनुभूति (द) इनमें से कोई नहीं।
5. सर्वप्रथम काव्य के पठन से किसका बोध होता है?
(अ) भाषा (ब) अक्षर
(स) शुद्धता (द) इनमें से कोई नहीं।
6. 'रिचर्ड्स ने इमोशन और एटीट्यूड के बीच वही संबंध माना है, जो संचारी भाव और स्थायी भाव के मध्य है'—यह कथन किसका है?
(अ) डॉ० नगेन्द्र (ब) डॉ० हरिवंशराय बच्चन
(स) डॉ० गणपति चंद्र (द) इनमें से कोई नहीं।

2.2 इलियट का निर्वैयक्तिकता का सिद्धांत

टी.एस. इलियट की सर्वाधिक प्रसिद्ध रचना "Tradition and Individual Talent" है। इसमें इलियट ने साहित्य की आधारभूत एवं मौलिक समस्याओं को प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया है। इलियट के समीक्षा संबंधी किए गए हैं; जैसे

नोट

(1) द सिक्रेट वर्ल्ड, (2) सलेक्टेड ऐसेस, (3) द यूज ऑफ पोयट्री एंड यूज ऑफ क्रिटिसिज्म, (4) पोयट्री एंड ड्रामा, (5) द थिसिस ऑफ पोयट्री। (6) ऑन पोयट्री एंड पोपट इत्यादि।

इलियट के विभिन्न काव्य सिद्धांत—इलियट के विभिन्न काव्य सिद्धांत इस प्रकार है—

निर्वैयक्तिकता का सिद्धांत—इलियट एजरा पाउंड के विचारों से काफी प्रभावित थे। एजरा पाउंड की मान्यता थी कि कवि वैज्ञानिक के समान ही निर्वैयक्तिक और वस्तुनिष्ठ होता है। कवि से प्रभावित हाकर इलियट अनेकता में एकता बाँधने के लिए परंपरा को आवश्यक मानते थे, जो वैयक्तिकता का विरोधी है। वह साहित्य के जीवन्त विकास के लिए परंपरा का योग स्वीकार करते थे। जिसके कारण साहित्य में आत्मनिष्ठ तत्त्व नियंत्रण हो जाता है और वस्तुनिष्ठ प्रमुख हो जाता है।

इस परंपरा सिद्धांत के द्वारा उन्होंने आत्मनिष्ठ साहित्य के स्थान पर वस्तुनिष्ठ साहित्य को महत्त्व प्रदान किया, कला को निर्वैयक्तिक घोषित किया और कवि को काव्य की स्वतंत्र अवतारणा के लिए माध्यम मात्र स्वीकार किया। उसका कथन है, “कवि व्यक्तिगत की अभिव्यक्ति नहीं करता, वरन् वह विशिष्ट माध्यम मात्र है। व्यक्तिगत भावों की अभिव्यक्ति कला नहीं है, वरन् उनसे पलायन कला है।” उनके प्रारंभिक वक्तव्यों से स्पष्ट है कि कविता उत्पन्न हो जाती है, उत्पन्न की नहीं जाती है।



नोट्स

इलियट ने कविता की उत्पत्ति को लेकर बाद में अपने मत में संशोधन करते हुए कहा कि “मैं उस समय अपनी बात ठीक से व्यक्त न कर सका था।”

बाद में निर्वैयक्तिक के संबंध में निम्न वक्तव्य दिया, “निर्वैयक्तिक के दो रूप होते हैं, एक वह जो कुशल शिल्पी मात्र के लिए प्राकृतिक होती है, दूसरा वह जो प्रौढ़ कलाकार के द्वारा अधिकाधिक उपलब्ध किया जाता है। दूसरे प्रकार की निर्वैयक्तिकता उस प्रौढ़ कवि की होती है, जो अपने उत्कट और व्यक्तिगत अनुभवों के माध्यमों से सामान्य सत्य को व्यक्त करने में समर्थ होता है।”



क्या आप जानते हैं? टी. एस. इलियट का जन्म 26 सितंबर, 1888 को सेंटलुई, मिसौरी (अमेरिका) में हुआ था।

उपयुक्त उद्धरण से स्पष्ट है कि भले ही उनके प्रारंभिक मत शब्दावली से लोगों को यह भ्रम हो गया हो कि वह कविता को कुशल-शिल्प-विधान मानते थे, परंतु बाद में चलकर कला की निर्वैयक्तिकता से इलियट का अभिप्राय मात्र कुशल शिल्पी की निर्वैयक्तिकता से नहीं है। अब तो वह कला की निर्वैयक्तिकता को प्रौढ़ कवि निजी अनुभवों की सामान्य अभिव्यक्ति मानता है। यह सिद्धांत भारतीय आचार्यों के साधारणीकरण से काफी मेल रखता है।



टास्क

टी. एस. इलियट कौन थे?

निर्वैयक्तिकता का अर्थ—इलियट ने इसका अर्थ कवि के व्यक्तिगत भावों की विशिष्टता का सामान्यीकरण बताया है।

निर्वैयक्तिकता का रूप—इलियट ने इसके दो रूप स्वीकार किए हैं—

(1) प्राकृतिक—जो प्रमुख शिल्पी या कलाकार के लिए ही होता है।

नोट

(2) विशिष्ट—जो प्रौढ़ कलाकारों द्वारा उपलब्ध की जाती है।

इलियट कवि एवं कलाकृति दोनों को परस्पर प्रभावित होना स्वीकार करते हैं, “मैं विश्वास करता हूँ कि कवि अपने पात्रों को अपना कुछ अंश अवश्य प्राप्त करता है, किंतु मैं यह भी विश्वास करता हूँ, कि वह अपने निर्मित पात्रों द्वारा स्वयं भी प्रभावित होता है।” अतः यह कहना गलत होगा कि इलियट कविता में कवि के व्यक्तित्व को अस्वीकार करता है। It means वह काव्य में कवि के व्यक्तित्व को भी स्वीकार करता है।

2.2.1 निर्वैयक्तिकता सिद्धांत की समीक्षा

इलियट के इस सिद्धांत पर यह आक्षेप किया गया कि कविता कवि व्यक्तित्व के निरपेक्ष नहीं हो सकती, कवि के अनुभव कविता में व्याप्त होकर साधारणीकृत बन जाते हैं, परंतु इस आक्षेप के प्रसंग में इलियट का यह कथन लिया जा सकता है कि उसका मूल उद्देश्य रोमांटिक काव्य की अतिशय वैयक्तिकता पर प्रश्नचिह्न लगाना था, क्योंकि इलियट वैसे तो कवि या कलाकार के व्यक्तित्व का समर्थक था।

कविता के तीन स्वर—इलियट ने ‘कविता के तीन स्वर’ नामक अपने व्याख्यान में काव्य के तीन स्वर माने हैं—

(1) प्रथम स्वर—जिसमें कवि किसी अन्य से नहीं, अपितु स्वयं से बात करता है। (2) द्वितीय स्वर—जिसमें वह श्रोताओं से बात करता है। (3) तृतीय स्वर, जिसमें कवि स्वयं वक्ता न होकर अपने पात्रों के माध्यम से बोलता है।

इसी प्रकार कविता के विषय में इलियट का कथन है कि वह स्वयं अवतरित हो जाती है, लिखी नहीं जाती। ऐसी दशा में कवि तो केवल माध्यम होता है। दूसरे स्वर में कविता किसी सजग सामाजिक उद्देश्य के लिए लिखी जाती है। तीसरे स्वर के अंतर्गत नाटक आते हैं। वास्तविक रूप में किसी भी कविता में केवल एक स्वर मिलना कठिन है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State whether the following statements are True or False) :

7. ‘Tradition and Individual Talent’ टी. एस. इलियट की प्रसिद्ध रचना है।
8. इलियट ने ‘कविता के तीन स्वर’ नामक अपने व्याख्यान में काव्य के चार स्वर माने हैं।
9. इलियट एजरा पाउंड के विचारों से प्रभावित नहीं थे।

2.3 सारांश (Summary)

- कवि से प्रभावित हाकर इलियट अनेकता में एकता बाँधने के लिए परंपरा को आवश्यक मानते थे, जो वैयक्तिकता का विरोधी है।
- इलियट ने कविता की उत्पत्ति को लेकर बाद में अपने मत में संशोधन करते हुए कहा कि, “मैं उस समय अपनी बात ठीक से व्यक्त न कर सका था।”
- इलियट कवि एवं कलाकृति दोनों को परस्पर प्रभावित होना स्वीकार करते हैं, “मैं विश्वास करता हूँ कि कवि अपने पात्रों को अपना कुछ अंश अवश्य प्राप्त करता है, किंतु मैं यह भी विश्वास करता हूँ, कि वह अपने निर्मित पात्रों द्वारा स्वयं भी प्रभावित होता है।”

2.4 शब्दकोश (Keywords)

- विधान : निर्माण, रचना, प्रणाली
- अवतारण : उतरना, नीचे लाना

- प्रेषणीय : यह गुण कि कोई कृति पाठक तक पहुंचती है

नोट

2.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. सम्प्रेषण से आप क्या समझते हैं?
2. रिचर्ड्स के सम्प्रेषणीयता सिद्धांत को समझाइए।
3. टी. एस. इलियट कौन थे?
4. इलियट के निर्वैयक्तिकता सिद्धांत की समीक्षा कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer : Self Assessment)

- | | | | |
|--------------|----------|--------------|----------|
| 1. इंग्लैण्ड | 2. रमणीय | 3. स्वाभाविक | 4. (अ) |
| 5. (ब) | 6. (स) | 7. सत्य | 8. असत्य |
| 9. असत्य। | | | |

2.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)



- पुस्तकें
1. पाश्चात्य काव्यशास्त्र – देवेन्द्रनाथ शर्मा।
 2. पाश्चात्य समीक्षा के सिद्धांत – मैथिली प्रसाद भारद्वाज।

नोट

इकाई-3 : प्रमुख आधुनिक साहित्यवाद-स्वच्छंदतावाद, मार्क्सवाद

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

- 3.1 स्वच्छन्दतावाद
- 3.2 मार्क्सवाद की वैचारिक पृष्ठभूमि
- 3.3 सारांश (Summary)
- 3.4 शब्दकोश (Keywords)
- 3.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
- 3.6 संदर्भ-पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे:

- स्वच्छंदता का अर्थ समझने हेतु।
- स्वच्छंदता की सामान्य विशेषताएँ जानने हेतु।
- मार्क्सवाद का अर्थ जानने हेतु।
- मार्क्सवाद की विचारधारा जानने हेतु।

प्रस्तावना (Introduction)

स्वच्छन्दतावाद को अंग्रेजी में 'रोमांटिसिज्म' कहा जाता है। इसका जन्मदाता 'रूसो' माना जाता है। फ्रांस की राज्य क्रांति (1789) से उत्पन्न विचारों ने 'स्वच्छन्दतावाद' की पृष्ठभूमि तैयार की थी। नव्यशास्त्रवादियों ने ग्रीक साहित्य को अपना आदर्श मानकर काव्य को शास्त्रीय नियमों में जकड़ दिया था, जिससे साहित्य की आत्मा उपेक्षित-सी हो गई थी। इसी के विरोध में स्वच्छन्दतावाद का जन्म 18वीं शती के अंतिम दशक एवं 19वीं शती के प्रारंभ में हुआ।

3.1 स्वच्छन्दतावाद

दूसरी ओर, हिन्दी की प्रगतिवादी कविता मार्क्सवाद से प्रभावित है। मार्क्स के अनुसार, भौतिक विकास को परिचालित करने वाली प्रवृत्ति का नाम द्वंद्वात्मक भौतिक विकासवाद है। स्वच्छन्दतावादी साहित्यकारों ने नियमबद्धता, परंपरासुरिता एवं आडम्बरप्रियता का डटकर विरोध किया और साहित्य को नियमों एवं आदर्शों की सीमा से बाहर निकालकर आंतरिक प्रेरणा से उन्मुक्त धरातल पर स्थित किया।

साहित्यिक रूप में 'रोमांटिसिज्म' का सर्वप्रथम प्रयोग फ्राँस में हुआ तथा इसका अर्थ ग्रहण किया गया 'काव्य की

नोट

मुक्त एवं स्वच्छन्द अभिव्यक्ति प्रणाली'। साहित्य में 'रोमांटिसिज्म' समर्थक कवियों ने प्रकृति को प्रमुखता दी और व्यक्ति की महत्ता बढ़ गई। स्वच्छन्दतावादी कवि व्यक्तिपरक दृष्टिकोण से काव्य को देखता है तथा उसमें कल्पना की प्रमुखता होती है। स्वच्छन्दतावाद की सामान्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

1. **विद्रोह की प्रवृत्ति**—यह प्रवृत्ति विषय, भाषा और शैली सभी क्षेत्रों में है।
2. **कृत्रिमता से मुक्ति**—कविता को आडम्बर एवं कृत्रिमता से मुक्ति दिलाई।
3. **कल्पना की प्रधानता**—स्वच्छन्दतावादी कवि कल्पना के मनोरम ऐन्द्रिय जगत में विचरण करता है और वह काल्पनिक सौंदर्य का उपासक बन जाता है।
4. **जगत से पलायन**—स्वच्छन्दतावाद का कवि संसार की संकीर्णताओं से ऊपर उठकर स्वप्नलोक में विचरण करता है।
5. **अद्भुत के प्रति मोह**—इस प्रवृत्ति ने रहस्यवाद को जन्म दिया है।
6. **वैयक्तिकता की भावना**—व्यक्तिवाद को प्रमुखता देने के कारण कवि अपनी रुचि, अपनी भावना और अपनी दृष्टि को ही प्रधानता देता है।
7. **स्वानुभूति को प्रमुखता**—कवियों ने अपनी दुखानु भूतियों, कुण्ठा, निराशा, हताशा, अतृप्त आकांक्षा को काव्य में अभिव्यक्त करते हुए स्वानुभूति को प्रधानता दी।
8. **सौंदर्य के प्रति मोह**—कल्पना की प्रधानता के कारण सौंदर्य चित्रण की प्रमुखता इस काव्य में है।
9. **प्रकृतिप्रियता**—स्वच्छन्दतावादी कवियों का प्रकृति के प्रति मोह है। प्रकृति उनके सुख-दुःख से प्रभावित होती दिखाई गई है।
10. **संगीतात्मकता**—गीति शैली को इन्होंने प्रमुखता प्रदान की है। ये अपने हृदयोद्गारों को गीत के माध्यम से सहज रूप में अभिव्यक्त करते दिखाई पड़ते हैं।

फ्रेड्रिक श्लेगल ने इसे 'रोमांटिसिज्म' नाम दिया, जबकि **विक्टर ह्यूगो** की दृष्टि में रोमांटिसिज्म का अभिप्राय 'साहित्यिक उदारवादिता' है। अंग्रेजी भाषा के कवि-वर्ड्सवर्थ, कालरिज, कीट्स और शैली तथा हिन्दी भाषा के छायावादी कवि प्रसाद, पन्त, निराला और महादेवी वर्मा की कविताओं में स्वच्छन्दतावाद (Romanticism) की विशेषताएँ देखी जा सकती हैं।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थान भरें (Fill in the blanks) :

1. साहित्यिक रूप से रोमांटिसिज्म का सर्वप्रथम प्रयोग में हुआ था।
2. स्वच्छन्दतावादी कवि व्यक्तिपरक दृष्टिकोण से को देखता है।
3. रोमांटिसिज्म का जन्मदाता को माना जाता है।

3.2 मार्क्सवाद की वैचारिक पृष्ठभूमि

हिंदी की 'प्रगतिवादी' कविता 'मार्क्सवाद' से प्रभावित है। सच पूछा जाए तो मार्क्सवाद का ही साहित्यिक रूप 'प्रगतिवाद' है। साम्यवादी विचारधारा का पोषण करने वाली रचनाओं को प्रगतिवादी रचनाएँ कहा गया। प्रगतिवादी विचारधारा का मूलधार मार्क्सवाद या साम्यवाद है, अंतः मार्क्सवाद की वैचारिक पृष्ठभूमि जाननी आवश्यक है।

नोट

मार्क्सवाद के प्रवर्तक कार्ल मार्क्स (1818-1883 ई.) एक जर्मन अर्थशास्त्री थे। उनकी विचारधारा को तीन भागों में बांट सकते हैं—

1. द्वन्द्वात्मक भौतिक विकासवाद
2. मूल्य वृद्धि का सिद्धांत
3. मानव सभ्यता के विकास की व्याख्या

मार्क्स के अनुसार भौतिक विकास को परिचालित करने वाली प्रवृत्ति का नाम **द्वन्द्वात्मक भौतिक विकासवाद** है। द्वन्द्वात्मक विकास का तात्पर्य वह है कि विकास द्वन्द्व (संघर्ष) से होता है। दो विरोधी शक्तियों के संघर्ष से तीसरी शक्ति विकसित होती है। बाद में इस तीसरी का संघर्ष चौथी से होता है और उससे पाँचवीं शक्ति विकसित होती है। इसी क्रम से इस भौतिक जगत में नई-नई शक्तियों का विकास होता रहता है।



क्या आप जानते हैं? मार्क्सवाद के अनुसार सृष्टि का विकास इसी द्वन्द्वात्मक भौतिक विकासवाद से हुआ है। इसीलिए वह किसी अलौकिक सत्ता-आत्मा, परमात्मा, स्वर्ग, नरक आदि के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करता।

मूल्य वृद्धि के सिद्धांत की व्याख्या करते हुए मार्क्स ने बताया कि वस्तु की उत्पत्ति के चार अंग हैं—(i) मूल पदार्थ, (ii) स्थूल साधन, (iii) श्रमिक का श्रम, (iv) मूल्य वृद्धि। पूँजीपतियों ने पूँजी के बल पर स्थूल साधनों अर्थात् मशीनों एवं उपकरणों पर एकाधिकार कर लिया है, परिणामतः मूल पदार्थ से उत्पादित वस्तु जिसमें श्रमिकों का श्रम भी सम्मिलित है, पूँजीपति को लाभ पहुँचाती है। पूँजीपति इस पूँजी के बल पर श्रमिकों का शोषण करता है। स्पष्ट रूप से।



नोट्स मार्क्स ने समाज को दो वर्गों में विभक्त किया—शोषक वर्ग (पूँजीपति, जमींदार, मिल मालिक, उद्योगपति) और शोषित वर्ग (मजदूर, श्रमिक, किसान, गरीब)।

मार्क्सवाद शोषण का विरोध करता है। उसे शोषितों के प्रति सहानुभूति है और वह शोषण को समाप्त कर समाज में साम्यवादी व्यवस्था स्थापित करना चाहता है।

विश्व-सभ्यता के विकास की व्याख्या भी मार्क्स ने इन्हीं दो वर्गों—शोषक, शोषित के आधार पर की है। मानव सभ्यता का समस्त इतिहास इन दो वर्गों के संघर्ष की गाथा है। इसे चार कालों में बाँटा जा सकता है—(i) दास प्रथा, (ii) सामन्ती प्रथा, (iii) पूँजीवादी व्यवस्था और (iv) साम्यवादी व्यवस्था। 'दास प्रथा' वह है जिसमें श्रमिक के व्यक्तित्व, उसके श्रम, उत्पत्ति के साधनों एवं उत्पादन—इन चारों पर मालिक अर्थात् शोषक का अधिकार था। आगे चलकर 'सामन्ती प्रथा' विकसित हुई जिसमें दासत्व से मुक्ति दे दी गई, किन्तु श्रम, साधन एवं उत्पादन इन तीनों पर सामन्त (शोषक) का अधिकार रहा। तीसरा युग 'पूँजीवादी व्यवस्था' का आया जिसमें मजदूर के व्यक्तित्व एवं उसके श्रम पर मालिक का अधिकार नहीं रहा, किन्तु शेष दो अर्थात् साधन एवं उत्पादन पर शोषक का अधिकार बना रहा। मार्क्स की मान्यता है कि यद्यपि प्रथम व्यवस्था से दूसरी व्यवस्था एवं दूसरी व्यवस्था से तीसरी व्यवस्था बेहतर थी तथापि मजदूरों को उत्पादन का पूरा लाभ तभी मिल सकता है जबकि उत्पादन के साधनों पर उनका अधिकार हो। यह व्यवस्था ऐसे समाज में संभव हो सकती है जिसमें मजदूरों का सत्ता पर अधिकार हो। कार्ल मार्क्स इस चौथी व्यवस्था को ही लागू करना चाहता था, जिसे उसने 'साम्यवादी व्यवस्था' का नाम दिया। यही वह व्यवस्था है जिसमें श्रमिक को उसके परिश्रम का पूरा लाभ मिल सकता है।

नोट

निष्कर्ष यह है कि मार्क्सवाद का लक्ष्य समाज में साम्यवादी व्यवस्था स्थापित करना है। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए वह विद्रोह, हिंसा एवं क्रांति का समर्थन करता है। मार्क्सवाद में शोषितों के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए प्रेरित एवं उत्तेजित किया गया है।

मार्क्सवाद की मान्यताओं में प्रमुख हैं-

1. धर्म, ईश्वर एवं परलोक का विरोध,
2. पूँजीपति वर्ग के प्रति घृणा का प्रचार,
3. शोषित वर्ग की दीनता एवं निर्धनता का चित्रण करते हुए उनके प्रति सहानुभूति,
4. नारी का यथार्थ चित्रण।

हिंदी साहित्य में प्रगतिवादी चेतना का सूत्रपात छायावाद के समाप्ति काल अर्थात् 1936 ई. से हुआ। रूप में प्रतिष्ठित साम्यवाद और पश्चिम के देशों में फैलता उसका प्रभाव भारतीय बुद्धिजीवियों के लिए प्रेरणाकेंद्र बन रहा था। गांधी जी का आंदोलन भी देश के कुछ नवयुवकों एवं गरम दल के लोगों को नहीं भा रहा था। राजनीतिक दासता पूँजीवाद को बढ़ावा दे रही थी जिसके विरुद्ध जनता में असंतोष था। जनसामान्य गरीबी, अशिक्षा, अपमान से त्रस्त था। कम्युनिज्म के सिद्धांतों से भारतीय बुद्धिजीवी प्रभावित हो रहे थे। सन् 1935 ई. के आस-पास भारत में साम्यवादी आंदोलन प्रारंभ हो गया था। पेरिस में 1935 ई. में 'प्रोग्रेसिव राइटर्स एसोसिएशन' नामक अंतर्राष्ट्रीय संस्था का उदय हो चुका था जिसकी एक शाखा सन् 1936 ई. में सज्जाद जहीर और डॉ. मुल्कराज आनंद के प्रयत्नों से भारत में स्थापित हुई।



क्या आप जानते हैं? 'प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना भारत में हुई जिसका पहला अधिवेशन लखनऊ में 1936 ई. में प्रेमचंद की अध्यक्षता में संपन्न हुआ।

प्रगतिवादी साहित्य ने शोषण का विरोध किया और किसानों, मजदूरों के संघर्ष को बल प्रदान किया। शोषक, स्वार्थी, स्वकेन्द्रित, जर्जर व्यवस्था की विसंगतियों पर प्रगतिवाद ने कसकर प्रहार किए हैं।



टास्क कार्लमार्क्स की विचारधारा को कितने भागों में बाँटा गया है?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. मार्क्सवाद के प्रवर्तक कौन थे?

(अ) अरस्तु	(ब) लौजाइनस
(स) कार्ल मार्क्स	(द) इनमें से कोई नहीं।
5. वह प्रथा क्या कहलाती है, जिसमें श्रमिक के व्यक्तित्व, उसके श्रम, उत्पत्ति के साधनों एवं उत्पादन-इन चारों पर मालिक अर्थात् शोषक का अधिकार होता है-

(अ) दास प्रथा	(ब) सती प्रथा
(स) नौकरशाही	(द) मजदूरी।

नोट

6. पेरिस में 'प्रोग्रेसिव राइटर्स एसोसिएशन' नामक अन्तर्राष्ट्रीय संख्या की स्थापना किस सन् में हुई थी?
- (अ) 1944 (ब) 1938
(स) 1936 (द) 1935।

3.3 सारांश (Summary)

- साहित्यिक रूप में 'रोमांटिसिज्म' का सर्वप्रथम प्रयोग फ्रांस में हुआ तथा इसका अर्थ ग्रहण किया गया 'काव्य की मुक्त एवं स्वच्छन्द अभिव्यक्ति प्रणाली'।
- मार्क्स के अनुसार, भौतिक विकास को परिचालित करने वाली प्रवृत्ति का नाम **द्वन्द्वात्मक भौतिक विकासवाद** है। द्वन्द्वात्मक विकास का तात्पर्य वह है कि विकास द्वन्द्व (संघर्ष) से होता है।
- हिंदी साहित्य में प्रगतिवादी चेतना का सूत्रपात छायावाद के समाप्ति काल अर्थात् 1936 ई. से हुआ। रूप में प्रतिष्ठित साम्यवाद और पश्चिम के देशों में फैलता उसका प्रभाव भारतीय बुद्धिजीवियों के लिए प्रेरणाकेंद्र बन रहा था।

3.4 शब्दकोश (Keywords)

- द्वन्द्वात्मक – संघर्षपूर्ण
- सामंतवाद – वह शासन व्यवस्था जिसमें राज्य की भूमि जमींदारों के अधिकार में रहती थी

3.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

- रोमांटिसिज्म से क्या अभिप्राय है?
- स्वच्छंदतावाद की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
- मार्क्सवाद से आप क्या समझते हैं?
- मार्क्सवाद की मान्यताओं को बताइए।
- मार्क्सवाद के द्वन्द्वात्मक भौतिक विकासवाद की व्याख्या कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer : Self Assessment)

- फ्रांस
- काव्य
- रूसो
- (स)
- (अ)
- (द)।

3.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)



- पुस्तकें
- नई समीक्षा के प्रतिमान – निर्मला जैन।
 - समीक्षा लोक – भागीरथ दीक्षित।

नोट

इकाई-4 : अस्तित्ववाद एवं मनोविश्लेषणवाद

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

4.1 अस्तित्ववाद : वैचारिक पृष्ठभूमि

4.2 मनोविश्लेषणवाद : वैचारिक पृष्ठभूमि

4.3 सारांश (Summary)

4.4 शब्दकोश (Keywords)

4.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

4.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे:

- अस्तित्ववाद के प्रवर्तक को जानने हेतु।
- अस्तित्ववादी विचारधारा को समझने हेतु।
- मनोविश्लेषणवाद का अर्थ समझने हेतु।
- मनोविश्लेषणवाद की व्याख्या करने हेतु।

प्रस्तावना (Introduction)

अस्तित्ववादी अनुयायियों का मत है कि सारे विचार और सिद्धांत व्यक्ति की चिंतन के परिणाम हैं। अर्थात् पहले मानव या व्यक्ति अस्तित्व में आया तत्पश्चात् उसके द्वारा विभिन्न विचारों या सिद्धांतों का निरूपण हुआ। अतः व्यक्ति का अस्तित्व ही प्रमुख है। उसके विचार या सिद्धांत गौण हैं। अस्तित्ववादी ईश्वर की सभा में विश्वास नहीं करते। वहीं मनोविश्लेषणवाद मानव व्यवहार का विश्लेषण करता है। हिन्दी के कुछ उपन्यासकारों जिनमें अज्ञेय, जैनेन्द्र एवं इलाचन्द्र आदि के नाम लिए जा सकते हैं, ने ऐसे पात्रों की सृष्टि की, जो फ्रायड, एडलर के सिद्धांतों से परिचालित हैं। फ्रायड ने मन के तीन भाग स्वीकार किये हैं—चेतन, अर्द्धचेतन और अचेतन। चेतन मन से हम सब कुछ देखते हैं, अनुभव करते हैं जबकि अचेतन मन दमित इच्छाओं, आकांक्षाओं और सुप्त वासनाओं की शरण-स्थली है।

4.1 अस्तित्ववाद : वैचारिक पृष्ठभूमि

अस्तित्ववाद के प्रवर्तक डेनिश विचारक सारन कीर्केगार्ड (1813-1855 ई०) थे। बाद में उनके ग्रंथों का अनुवाद जर्मन भाषा में हुआ और अंतर्राष्ट्रीय जगत में यह विचारधारा प्रचलित हुई। जर्मनी के विद्वान नीत्शे, हेडेगर, जेस्पर्स

नोट

तथा फ्रांस के विचारक गेन्रियल मार्शल, ज्यां पाल सार्त्र (1905) अलबर्ट कामू (1913-1960 ई०) के नाम अस्तित्ववादी विचारकों में प्रमुखता से लिए जाते हैं।

अस्तित्ववादी विचारधारा का आधारभूत शब्द 'अस्तित्व' है जो अंग्रेजी के शब्द का पर्याय है। इस विचारधारा के अनुयायियों का मत है कि सारे विचार और सिद्धांत व्यक्ति की चिंतना के परिणाम हैं अर्थात् पहले मानव या व्यक्ति अस्तित्व में आया तत्पश्चात् उसके द्वारा विभिन्न विचारों या सिद्धांतों का निरूपण हुआ। अतः व्यक्ति का अस्तित्व ही प्रमुख है। उसके विचार या सिद्धांत गौण हैं। स्पष्ट है कि अस्तित्ववाद व्यक्ति की वैयक्तिक स्वतंत्रता को सर्वाधिक महत्व दिया जाता है और यह विचारधारा वैज्ञानिकता एवं सामाजिकता को उतना महत्व नहीं देती।

अस्तित्ववादियों की धारणा है कि प्रत्येक सिद्धांत व्यक्ति की अपनी दृष्टि की उपज है, अतः वह व्यक्ति सापेक्ष है इसलिए किसी भी सिद्धांत को सर्वांगीण, सार्वभौमिक एवं सार्वजनिक नहीं माना जा सकता। दूसरे शब्दों में अस्तित्ववादी यह मानते हैं कि हर व्यक्ति को अपना सिद्धांत स्वयं खोजना चाहिए, दूसरों द्वारा प्रतिपादित या निर्मित सिद्धांतों को स्वीकार करना आवश्यक नहीं है। यही कारण है कि अस्तित्ववादियों के लिए सभी परंपरागत, सामाजिक, नैतिक एवं वैज्ञानिक सिद्धांत अमान्य एवं अव्यावहारिक सिद्ध हो जाते हैं।

अस्तित्ववादी मानते हैं कि परिस्थितियां और भाग्य, बाह्य सत्ता और कर्मफल जैसी कोई चीज नहीं होती। उसके विचार से प्रत्येक व्यक्ति अपने भाग्य का निर्माता स्वयं है। वह अपनी परिस्थितियों को अनुकूल या प्रतिकूल स्वयं बनाता है, इसके लिए किसी अन्य को दोष देना अनुचित है।



क्या आप जानते हैं अस्तित्ववादी ईश्वर की सत्ता में विश्वास नहीं करते। वे स्पष्ट घोषणा करते हैं कि ईश्वर तो मर गया।

ईश्वर के नाम पर लगाए गए विधि-निषेधों की ये अवहेलना करते हैं और इसीलिए परंपरागत आस्थाओं, नैतिक नियमों, जीवन विश्वासों के घोर विरोधी हैं। ये वैयक्तिक स्वच्छंदता, उपभोग की स्वतंत्रता, उन्मुक्त भोग, नास्तिकता, असामाजिकता, आचार-विरोध के पक्षधर हैं।

ईश्वर, परलोक, स्वर्ग-नरक, पाप-पुण्य, पूर्वजन्म, भाग्य एवं कर्मफल में इनकी कोई आस्था नहीं है। ज्यां पाल सार्त्र ने लिखा है:

“यदि ईश्वर का अस्तित्व न हो (न माना जाए) तो सब कुछ संभव है, क्योंकि उस स्थिति में मनुष्य निराश्रित होकर किसी भी आंतरिक या बाह्य वस्तु से नहीं बंध सकेगा।”

वस्तुतः अस्तित्ववादी प्रत्येक ईश्वर के कारण मानव पर लगाए गए अंकुशों को स्वीकार नहीं करता।

अस्तित्ववादी प्रत्येक व्यक्ति की स्वतंत्र सत्ता में विश्वास करता है अतः समूह के सामान्य निष्कर्षों को व्यक्ति पर लागू करना अन्याय मानता है। उदाहरण के लिए, हर प्रेमी पर निराशा की प्रतिक्रिया अलग-अलग होती है। कोई हताश होता है, तो कोई पलायनवादी, कोई हिंसक बन जाता है तो कोई आत्म बलिदानी।

व्यक्ति के जीवन का लक्ष्य मूलतः सुख, वैभव, लक्ष्य प्राप्ति है। व्यक्ति के क्रिया-कलापों का मूल्यांकन इसी मापदण्ड पर होता है कि उसने मानवता को सुखी बनाने के लिए क्या किया, किंतु अस्तित्ववादी इन लक्ष्यों को स्वीकार नहीं करता। व्यक्ति की कोई भी उपलब्धि, नैतिकता का कोई भी आदर्श, विज्ञान का कोई भी आविष्कार मानवता को पूर्ण सुखी नहीं बना सकता। मनुष्य जब तक मनुष्य है तब तक वह सुखी नहीं हो सकता। इसीलिए अस्तित्ववादी यह मानता है कि मानव जीवन को सुखी बनाने के सभी वैयक्तिक या सामूहिक प्रयास निरर्थक हैं। स्पष्ट ही अस्तित्ववादी इन महान विचारकों, समाज सुधारकों, राजनीतिकों को अधिक महत्व नहीं देता, क्योंकि ये लोगों

नोट

को अपने विचारों एवं सिद्धांतों पर चलने को विवश करते हैं जिससे व्यक्ति की स्वच्छंदता, स्वतंत्रता पर अंकुश लगता है जो अस्तित्ववादियों को कदापि स्वीकार नहीं है।

अस्तित्ववादी दुःख, पीड़ा, वेदना को जीवन की एक उपलब्धि मानते हैं। उनकी मान्यता है कि वेदना जितनी गहरी होगी अपने अस्तित्व का बोध भी उतना ही गंभीर होगा। अतः 'पीड़ा' अस्तित्ववादियों के लिए एक महत्वपूर्ण मूल्य और वांछनीय तत्त्व के रूप में स्वीकृत है। इनके अनुसार :

1. पीड़ा या संत्रास को मनुष्य के लिए अनिवार्य मानना चाहिए।
2. पीड़ा या संत्रास के भय को हृदय से निकालकर उससे पूर्ण मुक्ति पा लेनी चाहिए।
3. पीड़ा या संत्रास के प्रति अपनी चेतना को सदा जाग्रत रखते हुए अपनी समग्र शक्तियों के उपयोग द्वारा अपने अस्तित्व को सार्थक करना चाहिए।

समग्रतः यह कह सकते हैं कि पीड़ा ही अस्तित्वबोध की साधिका है। ध्यान रहे कि पीड़ा उनका साध्य नहीं, साधन है। व्यक्ति की पूर्ण स्वच्छंदता ही अस्तित्ववादियों का प्रमुख मूल्य है। चयन की पूर्ण स्वच्छंदता ही उनका ध्येय है इसीलिए वे नियमों, परंपराओं, सिद्धांतों, विचारों, मान्यताओं, मर्यादाओं की उपेक्षा करते हैं। अस्तित्ववादियों के जीवन दर्शन का मूलाधार चयन की स्वतंत्रता या वैयक्तिक स्वच्छंदता है। इसी से उनकी सब धारणाएँ—अस्तित्व बोध, नास्तिकता, असामाजिक विज्ञान विरोध, पीड़ा की महत्ता आदि विकसित हुई हैं।

अस्तित्ववाद की आधारभूत अवधारणाएँ संक्षेप में निम्न प्रकार निरूपित की जा सकती हैं:

1. व्यक्ति की महत्ता
2. क्षणवादी जीवन दर्शन
3. नास्तिकता
4. विज्ञान विरोध
5. पूर्ण स्वच्छंदता
6. उन्मुक्त भोग
7. दुःखवाद एवं पीड़ा
8. नैतिकता एवं आचार-संहिता का विरोध
9. मृत्यु का वरण
10. गद्यात्मक अभिव्यक्ति



टास्क अस्तित्ववाद से क्या अभिप्राय है।

अस्तित्ववाद पर कुछ आरोप भी लगाए गए हैं। विचारकों ने इस दर्शन की एकांगी, एकपक्षीय एवं अधकचरा बताया। इनमें वैचारिक एकरूपता नहीं पाई जाती तथा ये समस्त मानव एवं ज्ञान-विज्ञान के प्रति आदर भाव नहीं रखते। ये व्यक्ति को महत्त्व देते हैं, समाज को नहीं।

हिंदी की प्रयोगवादी एवं नई कविता अस्तित्ववाद से प्रभावित है। अज्ञेय, मुक्तिबोध, नरेश मेहता, धर्मवीर भारती, भारतभूषण अग्रवाल, शांता सिन्हा आदि के काव्य में उप निराशा, कुण्ठा, उन्मुक्त भोग, पीड़ा, अनास्था, नास्तिकता अस्तित्ववादी जीवन-दर्शन की देन है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थान भरें (Fill in the blanks) :

1. अस्तित्ववाद के प्रवर्तक थे।
2. अस्तित्ववादी की सत्ता में विश्वास नहीं करते।
3. अस्तित्ववादी दुःख, पीड़ा, वेदना को की एक उपलब्धि मानते हैं।

4.2 मनोविश्लेषणवाद : वैचारिक पृष्ठभूमि

आधुनिक साहित्य को 'मनोविश्लेषणवाद' ने भी पर्याप्त प्रभावित किया है। साहित्य का संबंध मानव मन से प्रगाढ़ रूप में है। अतः साहित्यकारों द्वारा प्रस्तुत चरित्र-चित्रण पर आधुनिक मनोविज्ञान एवं मनोविश्लेषणवाद का प्रभाव प्रमुख रूप में परिलक्षित होता है। मनोविज्ञान मानव व्यवहार का अध्ययन करता है और साहित्यकार मानव व्यवहार का विश्लेषण करता है। पाश्चात्य साहित्यकारों ने फ्रायड, एडलर एवं युंग के सिद्धांतों का उपयोग अपने पात्रों के चरित्रांकन में किया। हिंदी के कुछ उपन्यासकारों यथा-अज्ञेय, जैनेन्द्र एवं इलाचन्द्र जोशी ने ऐसे पात्रों की सृष्टि की जो फ्रायड, युंग एवं एडलर के सिद्धांतों से परिचालित हैं। इन चरित्रों को समझने के लिए हमें फ्रायड, युंग एवं एडलर के सिद्धांतों को मूलतः समझ लेना चाहिए।

फ्रायड ने अचेतन मन और काम भावना (लिविडो) का अपने मनोविश्लेषण में प्रमुख स्थान दिया। फ्रायड काम भावना (लिविडो) को मानव मन की मूल परिचालिका शक्ति मानता है। उसके अनुसार धर्म, अर्थ, साहित्य और संस्कृति की मूल प्रेरणा यही कामवृत्ति है। सर्जक (साहित्यकार, कलाकार) कल्पनाशील होने के कारण अपनी वर्जनाओं को काम प्रतीकों के रूप में अभिव्यक्ति देता है। जब हम सामाजिक मूल्यों एवं नैतिकता के बंधनों के कारण अपनी काम प्रवृत्ति एवं वासना का दमन करते हैं तब वह अचेतन मन में कुण्ठा या मनोग्रंथि का रूप धारण कर लेती है। साहित्य और कला इन वासनाओं एवं मनोग्रंथियों के रेचन का मार्ग प्रशस्त करती है।

'फ्रायड' ने मन के तीन भाग स्वीकार किए-चेतन, अर्द्धचेतन और अचेतन। चेतन मन से हम सब कुछ देखते और अनुभव करते हैं जबकि अचेतन मन दमित इच्छाओं, आकांक्षाओं और सुप्त वासनाओं की शरणस्थली है। अवसर पाकर ये दमित इच्छाएँ एवं सुप्त वासनाएँ कला या साहित्य में अभिव्यक्त होती हैं। फ्रायड यह भी मानता है कि चेतन और अचेतन में निरंतर द्वंद्व चलता रहता है। चेतन मन पर नैतिक, सामाजिक मर्यादाओं के बंधन होते हैं, अतः अचेतन की इच्छाएँ जब चेतना के धरातल पर आती हैं तब चेतन मन के संस्कार उसका निषेध करते हैं परिणामतः एक द्वंद्व उत्पन्न होता है जो मानसिक ग्रंथियों एवं कुण्ठाओं का रूप धारण कर लेता है। कभी-कभी अचेतन की इच्छाएँ चेतन मन के द्वारा परिष्कृत एवं उदात्त रूप में अभिव्यक्त होती हैं। चेतन और अचेतन के बीच अर्द्धचेतन होता है।

फ्रायड ने यह भी प्रतिपादित किया कि इन ग्रंथियों से 'अहं भाव' विकसित होता है। बहुत सारे चरित्र 'अहं' परिचालित होते हैं। फ्रायड मानव मन की मूल परिचालक शक्ति के रूप में 'लिविडो' (काम भावना) को स्वीकार करता है। जबकि सामाजिक एवं नैतिक बंधनों के कारण इसका मार्ग अवरुद्ध होता है तब कुण्ठा, मनोग्रंथि, अहं, उन्माद जैसे रोग उत्पन्न हो जाते हैं।



नोट्स

'एडलर' ने मानव के मन में उत्पन्न 'हीन भावना' को मन की परिचालिका शक्ति माना है।

हीनता की अनुभूति मनुष्य के मन अहं भाव को जन्म देती है और इससे परिचालित होकर वह अपने महत्त्व को अनुभव करने एवं कराने की आवश्यकता अनुभव करते हुए तदनुसार आचरण एवं व्यवहार करता है।

नोट

‘युग’ के अनुसार मनुष्य की स्मृतियाँ मानसिक कार्य व्यापार को चेतन मन में एकत्र नहीं रख पातीं और वे अचेतन में चली जाती हैं। अचेतन मन में दमित रहने वाली अनुभूतियाँ स्मृतियाँ एवं विचार ‘अहं’ को स्वीकार्य नहीं हो पाते, परिणामतः वहाँ भय, आशंका, मृत्यु जैसी स्थितियाँ उत्पन्न हो जाती हैं जिससे मनुष्य का जीवन प्रभावित होता है।

मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों ने अपने व्यक्ति चरित्रों का निर्माण इसी आलोक में किया है। अज्ञेय के उपन्यास ‘शेखर एक जीवनी’ का शेखर, जैनेन्द्र के त्यागपत्र की मृणाल एवं ‘सुनीता’ उपन्यास की नायिका ‘सुनीता’ और इलाचंद्र जोशी के पात्र चंद्रमोहन, महीप, नकुलेश आदि इन्हीं ग्रंथियों से परिचालित पात्र हैं।

वस्तुतः मानव का अंतर्जीवन ही उसके बहिर्जीवन का प्रेरक और परिचालक है। अंतर्मन के अतल में दबी प्रवृत्तियाँ वैयक्तिक जीवन को ही नहीं अपितु सामूहिक जीवन को भी प्रभावित करती हैं। मानव के वैयक्तिक एवं सामाजिक आचरण की मूल परिचालिका शक्ति इन्हीं अवदमित प्रवृत्तियों को मानना चाहिए। हिंदी के प्रमुख मनोविश्लेषणवादी उपन्यासकार इलाचंद्र जोशी ने मनोविज्ञान को एक अस्त्र के रूप में प्रयुक्त किया है जिसकी सहायता से वे ‘रुग्ण’ अंग का उपचार करके व्यक्ति को स्वस्थ बनाने पर बल देते दिखाई पड़ते हैं। मनोविश्लेषण के द्वारा वे उसके अंतरतम में प्रवेश कर मन में दबी विकृतियों एवं ग्रंथियों की निर्ममता से चीर-फाड़ करते हैं और समाज के सम्मुख उसका यथार्थ चरित्र प्रस्तुत कर देते हैं। उन्होंने अपने पात्रों के अंतर्मन में निहित कुण्ठाओं, हीनताओं को सामने लाकर उनके व्यवहार का विश्लेषण करने की अद्भुत पद्धति का विकास किया और यह दिखाने का प्रयास किया कि व्यक्ति के असामान्य व्यवहार का प्रेरक उसके अंतर्जगत की विकृतियाँ हैं। मनोविश्लेषणवाद की यही साहित्यिक उपयोगिता है जिसका उपयोग हिंदी के कतिपय उपन्यासकारों ने अपने साहित्य में किया है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

- फ्रायड ने अपने मनोविश्लेषण में किसे प्रमुख स्थान दिया है?

(अ) मन और कामभावना	(ब) अचेतन मन और कामभावना
(स) चेतन मन और कामभावना	(द) इनमें से कोई नहीं
- एडलर ने किसे मानव के मन में उत्पन्न मन की परिचालिका शक्ति माना है?

(अ) कामभावना	(ब) हीनभावना
(स) पश्चात्ताप की भावना	(द) इनमें से कोई नहीं
- किसके अनुसार ‘मनुष्य की स्मृतियाँ’ मानसिक कार्य व्यापार को चेतन मन में एकत्र नहीं रख पातीं?

(अ) फ्रायड	(ब) एडलर
(स) युग	(द) इनमें से कोई नहीं

4.3 सारांश (Summary)

- अस्तित्ववादी मानते हैं कि परिस्थितियाँ और भाग्य, बाह्य सत्ता और कर्मफल जैसी कोई चीज नहीं होती। उसके विचार से प्रत्येक व्यक्ति अपने भाग्य का निर्माता स्वयं है।
- अस्तित्ववादी प्रत्येक व्यक्ति की स्वतंत्र सत्ता में विश्वास करता है अतः समूह के सामान्य निष्कर्षों को व्यक्ति पर लागू करना अन्याय मानता है।
- मनोविज्ञान मानव व्यवहार का अध्ययन करता है और साहित्यकार मानव व्यवहार का विश्लेषण करता है।
- ‘फ्रायड’ ने मन के तीन भाग स्वीकार किए—चेतन, अर्द्धचेतन और अचेतन। चेतन मन से हम सब कुछ देखते

नोट

और अनुभव करते हैं जबकि अचेतन मन दमित इच्छाओं, आकांक्षाओं और सुप्त वासनाओं की शरणस्थली है।

- हिंदी के प्रमुख मनोविश्लेषणवादी उपन्यासकार इलाचंद्र जोशी ने मनोविज्ञान को एक अस्त्र के रूप में प्रयुक्त किया है जिसकी सहायता से वे 'रुग्ण' अंग का उपचार करके व्यक्ति को स्वस्थ बनाने पर बल देते दिखाई पड़ते हैं।

4.4 शब्दकोश (Keywords)

- जर्जर : जो कमजोर एवं बेकार हो, जिसका महत्व कम हो गया (जैसे साहित्यिक परंपराओं का जर्जर हो जाना)
- दमित : दमन (बलपूर्वक शांत करने का काम) किया हुआ।

4.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. अस्तित्ववाद के प्रवर्तक कौन थे?
2. अस्तित्ववाद की आधारभूत अवधारणाओं को लिखिए।
3. मनोविश्लेषणवाद से आप क्या समझते हैं?
4. मनोविश्लेषणवाद पर फ्रायड एवं एडलर के विचारों का विश्लेषण कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer : Self Assessment)

1. सारन कीर्केगार्ड
2. ईश्वर
3. जीवन
4. (ब)
5. (ब)
6. (स)।

4.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)



- पुस्तकें
1. भारतीय काव्यशास्त्र – सत्यदेव चौधरी।
 2. पाश्चात्य काव्यशास्त्र – देवेन्द्रनाथ शर्मा।

नोट

इकाई-5 : आधुनिकतावाद एवं उत्तर-आधुनिकतावाद

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

5.1 आधुनिकता का अर्थ

5.1.1 आधुनिकता के मूल तत्व

5.1.2 आधुनिकतावाद

5.2 उत्तर-आधुनिकतावाद

5.3 सारांश (Summary)

5.4 शब्दकोश (Keywords)

5.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

5.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे:

- आधुनिकता का अर्थ समझने हेतु।
- आधुनिकता एवं आधुनिकतावाद में अंतर करने हेतु।
- उत्तर-आधुनिकतावाद का अर्थ जानने हेतु।
- उत्तर-आधुनिकतावाद के दर्शन की व्याख्या करने हेतु।

प्रस्तावना (Introduction)

आधुनिकता एक सतत् प्रक्रिया है, जिसमें निरंतरता का गुण विद्यमान है। आधुनिकता के लिए मॉडर्निटी शब्द प्रयुक्त होता है। जिसका कोशगत अर्थ है—नूतनता, नवीनता और आधुनिकता। आधुनिकता संस्कृति को गतिशीलता देती है तथा उसके संचरण की दिशा भी निर्देशित करती है। जबकि उत्तर-आधुनिकतावाद पूँजीवादी विकास की नई स्थिति है। आधुनिकतावाद के जन्मदाता ल्योतार का मानना है कि हर वह स्थिति अथवा प्रक्रिया आधुनिकता है, जो अपनी वैधता की सिद्धि के लिए 'अतिवृत्तांत' या 'महावृत्तांत' का संदर्भ देती है। उनके अनुसार उत्तर-आधुनिकता का तात्पर्य आधुनिकता की समाप्ति के बाद की स्थिति नहीं है, अपितु यह सिद्ध करती है कि इस प्रकार की आधुनिकता का जन्म अब नहीं होगा।

5.1 आधुनिकता का अर्थ

आधुनिकता को सही अर्थों में परिभाषित कर पाना एक जटिल प्रक्रिया है। क्योंकि आधुनिकता की अवधारणा किसी

नोट

एक तत्त्व पर आश्रित नहीं है। आधुनिकता जीवन की प्रगतिशील अवधारणा है, एक दृष्टिकोण है, एक बोध प्रक्रिया है, एक संस्कार प्रवाह है। आधुनिकता को रूढ़ि से अनवरत विद्रोह करना पड़ता है, क्योंकि वह परंपरा का विकास है।

अंग्रेजी में 'आधुनिक' का पर्यायवाची शब्द 'मॉडर्न' है जो नवयुगीन, वर्तमान से संबद्ध रीति-रिवाज और 'व्यक्ति' के अर्थ में प्रयुक्त होता है। आधुनिकता के लिए वहाँ 'मॉडर्निटी' शब्द प्रयुक्त होता है जिसका कोशगत अर्थ है—नूतनता, नवीनता और आधुनिकता। वस्तुतः 'आधुनिकता' केवल 'नवीनता' के अर्थ को व्यक्त नहीं करती, अपितु इसमें देशकाल की जीवन्तता के साथ विवेकयुक्त वैज्ञानिक दृष्टि भी जुड़ी हुई है।

आधुनिकता एक सतत् प्रक्रिया है जिसमें निरंतरता का गुण विद्यमान है। आधुनिकता एक दृष्टि है जिसे नपे-तुले शब्दों में नहीं बांधा जा सकता है। यह एक जटिल प्रक्रिया है जो कई स्तरों पर होती है। डॉ. धनंजय वर्मा ने अपनी पुस्तक 'आधुनिकता के बारे में तीन अध्याय' में लिखा है—“मेरी धारणा है कि आधुनिकता मानव विकास यात्रा की जटिल, संश्लिष्ट और गतिशील प्रक्रिया है। यह केवल एक स्थिति और धारणा ही नहीं है, निरंतर नए होते जाने की वृत्ति और वर्तमानता का बोध भी है। इसीलिए मैं आधुनिकता को परंपरा या पुरातनता का केवल विलोम नहीं मानता। आधुनिकता का सारा चिंतन और उपक्रम प्राचीन और आधुनिक के द्वंद्व से उपजी संक्रान्ति का परिणाम है।”

आधुनिकता का संस्कार वैज्ञानिक सोच से जुड़ा हुआ है। विज्ञान ने हमें पुरातन मूल्यों को तर्क की कसौटी पर कसना सिखाया है। उसने मानव ज्ञान को निरंतरता और चिर नूतनता के प्रति विश्वस्त किया है और यही अर्थ 'आधुनिकता' के मूल में भी है। आधुनिकता संस्कृति को गतिशीलता देती है तथा उसके संचरण की दिशा भी निर्देशित करती है। सच तो यह है कि आधुनिकता की सांस्कृतिक विकास की प्रेरक है। विवेकयुक्त चिंतन से ही आधुनिकता को देखना-परखना समीचीन है, क्योंकि आधुनिकता मूल्यों का नवीनीकरण भी करती है और नए मूल्य भी प्रदान करती है।

आधुनिकता को रूढ़िग्रस्त मानसिकता से नहीं समझा जा सकता और न ही उसका प्रतिमानीकरण किया जा सकता है।

5.1.1 आधुनिकता के मूल तत्त्व

आधुनिकता के मूल तत्त्व निम्न प्रकार हैं:

1. वैज्ञानिक चेतना
2. तटस्थ बुद्धिवाद
3. प्रश्नाकुल मानसिकता
4. युगबोध एवं समसामयिकता
5. अस्तित्व चेतना
6. संत्रास एवं अलगाव
7. मूल्य संकट एवं मूल्य संक्रमण

आधुनिक दृष्टि अनिवार्यतः बौद्धिक है। स्वविवेक की कसौटी पर कसे बिना वह मान्यताओं को स्वीकार नहीं करती। आधुनिकता एक प्रश्नाकुल मानसिकता है जो हर बंधी-बंधाई व्यवस्था, मर्यादा या धारणा को तोड़ती है। युगबोध एवं समसामयिकता को आधुनिकता से अनिवार्यतः संबद्ध किया जाता है, क्योंकि आधुनिकता वस्तुतः समसामयिक मूल्यों का प्रतिफलन है। युगबोध भी आधुनिकता का प्रमुख लक्षण है, क्योंकि युग से असंपृक्त होकर कोई भी व्यक्ति आधुनिक होने का दावा नहीं कर सकता। अपने अस्तित्व के प्रति सजग चेतना भी आधुनिकता का एक लक्षण है।

नोट

मूल्यों, मान्यताओं, आशाओं एवं आकांक्षाओं के प्रति 'मोह-भंग' व्यक्ति को 'संत्रास' एवं 'अलगाव' से भर देता है। स्वतंत्रता के उपरांत मूल्यों का विघटन तेजी से हुआ। आधुनिकता का भावबोध हमें पुराने मूल्यों का त्याग करने एवं नवीन को ग्रहण करने के लिए विवश करता है। वस्तुतः "सभी प्रकार के अतिवाद से बचते हुए जिज्ञासा को जीवित रखना" ही आधुनिकता को पहचानने का मार्ग है।

हिन्दी के कथा साहित्य में 'आधुनिकता बोध' का समावेश हुआ है समकालीन साहित्य में घुटन, टूटन, अकेलापन, बदलते जीवन मूल्य, निराशा, पीढ़ीगत अंतराल, मृत्युबोध, अस्तित्व चेतना आदि अनेक रूपों में आधुनिकता दिखाई पड़ती है। मोहन राकेश, धर्मवीर भारती, राजेन्द्र यादव, मन्मू भण्डारी, उषा प्रियंवदा, मुक्तिबोध, अमरकान्त, गिरिराज किशोर, दीप्ति खण्डेलवाल आदि अनेक साहित्यकारों में आधुनिकता बोध दिखाई पड़ता है। आधुनिकता के दौर में हिंदी कहानी का सांचा बदल गया है उसका समूचा व्याकरण परिवर्तित हो गया है तथा उसने एक नई दिशा पकड़ ली है।

समीक्षा, आलोचना और विवेचना के क्षेत्र में हिंदी साहित्य का रीतिकाल तो संस्कृत काव्यशास्त्र पर आधारित रहा। उस समय हिंदी वालों की पहुँच संस्कृत तक ही थी। मुसलमान बादशाहों, नवाबों, और उमरावों ने फारसी का प्रचार किया, पर उसकी पहुँच अधिक लोगों तक नहीं थी। फारसी में एक काव्यशास्त्र पर्याप्त तथा सुलझा हुआ नहीं था, दूसरे वह समय किसी विदेशी तत्त्व को स्वीकार करने के साहस से हीन था। हिंदी साहित्य का आधुनिक काल अंग्रेजी शासन में आरंभ हुआ। अंग्रेजों ने अपने धर्म के साथ-साथ अपनी भाषा एवं शिक्षा नीति का भी प्रचार किया। लॉर्ड मैकाले ने जो शिक्षा नीति बनायी, वह शासन की गाड़ी खींचने के लिए क्लर्क पैदा करने के उद्देश्य पर आधारित थी। अंग्रेजी साहित्य का अध्ययन करने वालों ने अंग्रेजी साहित्य को भी पढ़ा। उन्हें अंग्रेजी कविता और समीक्षा में बहुत कुछ नया प्रतीत हुआ, जिसे उन्होंने हिन्दी में उतारना और प्रचलित करना आवश्यक समझा। हिन्दी में स्वच्छन्दतावाद, छायावाद, प्रगतिवाद और प्रयोगवाद का अवतरण अंग्रेजी से ही हुआ है। हिंदी में निराला ने तुकविहीन और विषम पंक्तियों की कविता आरंभ की तो उस छन्द को रबर छन्द और केंचुआ छंद कहकर हँसी का विषय बनाया, पर निराला को इसकी प्रेरणा अंग्रेजी कविता से मिली थी। प्रयोगवादी कवियों ने संस्कृत और हिन्दी के प्रचलित तथा प्राचीन छंदों को पूरी तरह से नकार दिया और मुक्त छंद में कविता आरंभ की।

हिंदी समालोचना अथवा समीक्षा का प्रवर्तक **आचार्य रामचन्द्र शुक्ल** को माना जाता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि शुक्ल जी संस्कृत के काव्यशास्त्र से भली-भाँति परिचित थे, परंतु उन पर अंग्रेजी का भी पर्याप्त प्रभाव था। शुक्ल जी ने जिस आलोचना का आरंभ किया, वह अंग्रेजी से प्रभावित थी।

अनेक ऐसे वाद हैं, जिनका जन्म फ्रांस में हुआ। अंग्रेजों ने उन्हें अपनाया और अंग्रेजी भाषा ने उन्हें बहुप्रचलित बनाया। विखण्डनवाद, संरचनावाद, उत्तर-संरचनावाद, आधुनिकतावाद और उत्तर-आधुनिकतावाद ऐसी विचारधाराएँ हैं, जिनका जन्म फ्रांस में हुआ तथा अंग्रेजी के माध्यम से उनका विश्व में प्रचार हुआ।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थान भरें (Fill in the blanks) :

1. अंग्रेजी में का पर्यायवाची शब्द मॉडर्न है।
2. आधुनिकता एक प्रश्नाकुल है, जो हर बँधी-बँधाई व्यवस्था, मर्यादा या धारणा को तोड़ती है।
3. हिन्दी समालोचना अथवा समीक्षा का प्रवर्तक को माना जाता है।

5.1.2 आधुनिकतावाद

आधुनिकतावाद का जन्म फ्रांस में हुआ। क्यूबेक सरकार के आग्रह पर फ्रांसीसी विद्वान 'फ्रांसुआल्योतार' ने विकसित समाजों में विज्ञान और तकनीकी भूमिका तथा भाषा और व्यवहार के विषय में कुछ निष्कर्ष निकाले। वे निष्कर्ष 'द

नोट

पोस्ट मॉडर्न कंडीशन : ए रिपोर्ट ऑन नॉलेज' नामक रिपोर्ट में सुरक्षित किये गये। यह रिपोर्ट मूल फ्रांसीसी भाषा में सन् 1979 में प्रकाशित हुई। मेनचेस्टर यूनिवर्सिटी प्रेस ने सन् 1986 में इसका अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित किया। फ्रांसुआल्योतार की रिपोर्ट अथवा पुस्तक में जो 'पोस्ट मॉडर्न' पद है, इसी का हिंदी अनुवाद 'उत्तर-आधुनिक के रूप में हुआ। इसके प्रचलन के बाद आधुनिक को आधुनिकता में बदलकर 'उत्तर-आधुनिकता' बनाया गया। बाद में इस विचारधारा को 'उत्तर-आधुनिकतावाद' कहा गया।

यह तथ्य डॉ. सुधीश पचौरी की पुस्तक 'आलोचना से आगे' के आधार पर प्रस्तुत किया है। डॉ. सत्यदेव पचौरी ने अपनी पुस्तक 'पाश्चात्य काव्यशास्त्र : अधुनातन संदर्भ' में संकलित अपने निबंध 'उत्तर-आधुनिकतावाद' उत्तर-आधुनिकता अथवा 'पोस्ट मॉडर्न' शब्द के प्रयोग की बात इससे पहले ही होने की इस प्रकार कही है, "उत्तर-आधुनिकता" पदबंध **जान बार्थ** ने सन् 1967 में कला के संदर्भ में प्रयोग किया। सन् 1974 में **पीटर बर्जर** ने तथा **ल्योतार** ने सन् 1979 में अपने ग्रंथ 'The Post Modern Condition: A Report on Knowledge' में **फ्रेडरिक जॉनसन** ने अपनी कृतियों 'Post Modernism', 'The Cultural Logic of Late Capitalism' आदि में इस अवधारणा की आधारशिला रखी। ल्योतार ने आधुनिकतावाद से महावृत्तांतों (Grand Narrative) का संबंध माना है। उनकी दृष्टि में महावृत्तांतों में एक तारतम्य, समग्रता और आध्यात्मिकता का द्वंद्व होता है। उत्तर-आधुनिकतावाद महावृत्तांतों का विरोधी है।"



टास्क आधुनिकतावाद का उद्भव किस देश में हुआ था?

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. आधुनिकतावाद का जन्म किस देश में हुआ था?
(अ) अमेरिका (ब) रूस
(स) फ्रांस (द) इनमें से कोई नहीं
5. 'आलोचना से आगे' पुस्तक किसके द्वारा लिखी गई है?
(अ) आचार्य रामचन्द्र शुक्ल (ब) डॉ० सुधीश पचौरी
(स) डॉ० नगेन्द्र (द) इनमें से कोई नहीं
6. 'पाश्चात्य काव्य : अधुनातन संदर्भ' किसके द्वारा लिखित पुस्तक है?
(अ) डॉ० नगेन्द्र (ब) डॉ० सुधीश पचौरी
(स) डॉ० सत्यदेव पचौरी (द) इनमें से कोई नहीं

5.2 उत्तर-आधुनिकतावाद

उत्तर-आधुनिकतावाद के पहले हिंदी में आधुनिकतावाद शब्द या विचार आया था। इसे अभी ठीक से समझा नहीं गया, तब तक उत्तर-आधुनिकतावाद आ गया। उत्तर-आधुनिकतावाद को भ्रमवश लोगों ने क्या-क्या समझा है, इसके विषय में डॉ. सुधीश पचौरी का कथन इस प्रकार है—

"उत्तर-आधुनिकतावाद पर विचार करते हुए कई लोग ऐसी निष्पत्तियाँ करते हैं कि लगता है, जैसे उत्तर-आधुनिकता शुद्ध दर्शन या अवधारणा के क्षेत्र में निकला हुआ कोई विचार हो। कुछ लोग झोंक में यह भी सोच सकते हैं कि

नोट

यह सब कुछ जो आधुनिकता के विरुद्ध जाता है, वह सब 'उत्तर-आधुनिक' है। कई लोग 'उत्तर-आधुनिकता' को पश्चिमी समाज में प्रचलित समलैंगिकता और कमेरी अविवाहित अकेली स्त्रियों में देखते हैं। कई उसे बाजार और 'उपभोक्ता संस्कृति' का पर्याय कहते हैं। कई इसे उस पुनरुत्थान का पर्याय मानते हैं, जो अब दूसरी दुनिया के देशों में 'धर्मतत्त्ववाद' के रूप में दिखाई पड़ने लगा है। 'इस्लाम एण्ड पोस्ट मॉडर्निज्म' में लेखक अकबर अहमद उत्तर-आधुनिकतावाद को पश्चिम की भूमण्डलीय सभ्यता की 'जीत' और इस्लाम के लिए चुनौती मानते हैं। ऐसे तर्कों से भारत में हिन्दुत्व के उभार को उत्तर-आधुनिक स्थिति के प्रति प्रतिक्रिया का एक संकेत सिद्ध किया जा सकता है। स्थितियों का यह बहुवचनवाद स्वयं एक उत्तर-आधुनिक दृश्य है।"

इससे स्पष्ट होता है कि भारत में अधिकांश विचारक उत्तर-आधुनिकतावाद को या तो समझ नहीं पाये हैं अथवा गलत समझ रहे हैं। यहाँ तक की स्थिति तो क्षम्य और चिंतनीय हो सकती है, पर हिंदी में उत्तर-आधुनिकतावाद और उत्तर-संरचनावाद के विषय में परिचित कराने के अपराध में डॉ. सुधीश पचौरी का उग्र विरोध हुआ है। यह स्थिति कछुआ धर्म की है, जो लोग जितना जानते हैं, उसी में मग्न और संतुष्ट हैं तथा बाहर से आने वाली हवा को रोकने के लिए दिमाग के दरवाजे बंद कर रखे हैं, उन्हें सुधीश पचौरी का आभारी होना चाहिए।

डॉ. सुधीश पचौरी ने अपनी पुस्तक 'आलोचना से आगे' के 'उत्तर' शीर्षक में जो कुछ लिखा है, उसका एक अंश इस रूप में है—

"हिंदी में 'उत्तर-आधुनिकतावाद' और 'उत्तर-संरचनावाद' के बारे में पहली सूचना देने का अपराध लेखक ने किया था, उसके नतीजे बड़े दिलचस्प रहे हैं। हिंदी में उत्तर-युग की शुरुआत अब मानी जाने लगी है। इन पदों के चलन में आते ही पहली प्रतिक्रिया प्रगतिशील-समीक्षा और नव्य-समीक्षा के खर्च हो चुके उस्तादों में दिखी। वे खिसियाए, परेशान हुए और फिर इसके खिलाफ खड़े हो गये, लेकिन बिना उसे जाने, बिना उसे पढ़े। मनोरंजक सूचना यह है कि पिछले बरसों लगातार कई-कई परशुराम अपने फरसे को दिखाते रहे, लेकिन नई स्थितियों, नई सिद्धांतिकियों के बारे में उन्होंने न तब जाना-पढ़ा, न अब, जबकि जीवन में वे अंकन उन्हीं 'उत्तर-दिशाओं' में डूबे हुए हैं।"

दूसरी प्रतिक्रिया, जो कुछ अरसे बाद हुई, नई उत्तर-आधुनिकता को अपना बनाने की रही और कहा जाने लगा कि यह कोई नई बात नहीं है।

तीसरी प्रतिक्रिया एकदम उत्तर-आधुनिक किस्म की रही। कई कविताओं-कहानियों में उत्तर-आधुनिकता पद पर ऐसी फब्कियाँ कसी गईं, मानो वह सड़क पर पड़ी कोई कृतियाँ हों, जिसे हर शोहदा लात मारकर निकालना जरूरी समझता है। वह प्रायः मजाक का विषय बनी। यह उसकी स्वीकृति से ज्यादा उसके महत्त्व को स्वीकार करता था।

चौथी किंतु सर्वाधिक दयनीय प्रतिक्रिया उन रणबाँकुरों की रही जो बताने लगे कि उत्तर-आधुनिकता तो पश्चिम में मर चुकी। इस लेखक ने कहा कि अगर मर चुकी है तो आप क्यों परेशान होते हैं?

डॉ. सुधीश पचौरी के इस कथन से यह तथ्य सामने आता है कि हिंदी जगत् को 'उत्तर-आधुनिकतावाद' से सबसे पहले उन्होंने परिचित कराया और इसे समझाने के स्थान पर हिंदी के मठाधीशों और ठेकेदारों ने इसे समझने का प्रयत्न नहीं किया। अब प्रश्न रह जाता है कि उत्तर-आधुनिकता आखिर है क्या, इस पर चर्चा करने से पूर्व डॉ. सत्यदेव मिश्र ने इसका जो परिचय दिया, उसे जान लेना सुविधाजनक होगा।



क्या आप जानते हैं? "उत्तर-आधुनिकता पूँजीवादी विकास की नई स्थिति है। नवपूँजीवाद की नाना विकृतियों और नाना रूपों से सामाजिक साक्षात्कार उत्तर-आधुनिकता है।

उत्तर-आधुनिकता एक सामाजिक विचारधारा या विचारधारा (प्रत्यय) है। 'उत्तर-आधुनिकतावादी' उस सामाजिक विधारणा का संस्कृति रूप या सांस्कृतिक अवधारणा (प्रत्यय) है।"

नोट

उत्तर-आधुनिकता विशेषणहीन वृत्तांत की पक्षधर है। महावृत्तांतों (रामायण, महाभारत, बाइबिल आदि) का नकार उसका मूल मंत्र है। उत्तर-आधुनिकता मूल्य मीमांसा को भी नकारती है। वह मूल्यहीनता का पक्षधर है। वह अनुभावन पर बल देती है। यह एक व्यक्ति केंद्रित (अनुभावन की दृष्टि से) समीक्षा या चिंतनदृष्टि है। कुछ भी अपने में संपूर्ण नहीं होता। अतः संपूर्णता (Totality) की धारणा का उत्तर-आधुनिकतावाद खंडन करती है। मूल्यवादी दृष्टि से विचार करें तो बोंदा और ल्योतार दोनों ही मूल्यों को नकारते हैं आराजकतावादी हैं। चूंकि प्रौद्योगिकी, तकनीक और सूचना विस्फोट (क्रांति) ने पूरे विश्व की भौगोलिक सीमाओं को तोड़ा है और विश्व बाजार, विश्व नगर जैसी धारणाओं को जन्म दिया है, इसलिए संपूर्णतावादी विचारों का यहाँ खंडन है। वस्तुतः उत्तर-आधुनिकता साहित्य समीक्षा की एक प्रणाली हो सकती है। यह स्थूल अर्थ के स्थान पर साभिप्रायता और अर्थ की अनेक छायाओं और प्रतिछायाओं के लीला-व्यापार को रेखांकित करने वाली समीक्षा दृष्टि है। यहाँ अर्थवेत्ता को विलोपित और स्थगित नहीं किया जाता, वरन् अर्थ विच्छिन्नता की संधान क्रिया करने के लिए कुछ समय के लिए अर्थ का स्थगन किया जाता है। उत्तर-आधुनिकता में शब्दजाल की एक क्रीड़ा है, जिसे भावकीय/आलोचकीय अनुभावन से प्राप्त अन्यान्य अर्थों से सम्पृक्त किया जा सकता है। भाषा या पाठ के केंद्र में जैसे उत्तर-संरचनावाद में रखा जाता है, उसी तरह उत्तर-आधुनिकतावाद में। उत्तर-संरचनावाद और उत्तर-आधुनिकतावाद में साम्य के अनेक धरातल हैं और एक-दूसरे के पूरक भी हैं। उत्तर-आधुनिकतावादी सिद्धांतों का अतिक्रमण तथा सांस्कृतिक साहित्यानुशासन से विरक्ति और श्रवणीयता के प्रति आसक्ति पाई जाती है। प्रतीकवादी और बिंबवादी संकल्पनाओं की अस्वीकृति यहाँ है तथा श्रवणीयता पर बल है अर्थात् जो संदेश साहित्य में प्रत्यक्षतः यहाँ सुनाई दे रहा है, उसी की अनुगूँज की तलाश होनी चाहिए अर्थात् काव्यगत व्यंग्य रेखांकित होना चाहिए।”

ल्योतार ने उत्तर-आधुनिकता को ज्ञान की ऐसी अवस्था बताया है जो उच्च विकसित समाजों में पिछले दशकों में बड़ी है। उत्तर-आधुनिकतावाद पर समाजशास्त्र, दर्शनशास्त्र राजनीति, सौंदर्यशास्त्र और साहित्यशास्त्र में प्रचलित हो गया है। आधुनिकतावाद की स्थिति विचित्र है। आधुनिकतावादी कभी अपने सुधारवाद में उसी व्यवस्था को पुष्ट करता है, जिसे उसने तोड़ने का प्रयत्न किया था। ल्योतार ने आधुनिकतावादी ज्ञानावस्था के नये सीमांतों को उधेड़ दिया है।

आधुनिकतावाद को जन्म देने वाले ल्योतार के अनुसार हर वह स्थिति अथवा प्रक्रिया आधुनिक है जो अपनी वैधता की सिद्धि के लिए ‘अतिवृत्तांत’ या ‘महावृत्तांत’ का संदर्भ देती है। वैधता से ल्योतार का तात्पर्य वैधता है। उत्तर-आधुनिकता का तात्पर्य आधुनिकता की समाप्ति के बाद की स्थिति नहीं है, अपितु यह सिद्ध करती है कि इस प्रकार की आधुनिकता का जन्म अब नहीं होगा।

ल्योतार ने विकसित समाजों में तकनीकी स्थितियों में चली आ रही अवधारणा को अवैध सिद्ध किया है और बार-बार यह दिखाया है कि आधुनिकता की सीमाएँ हैं। उनके अनुसार यथार्थवाद का प्रतिनिधि कोई भी वाद नहीं हो सकता। **डेनियल बैल** ने इस बात की चर्चा की है कि सभी चीजों का उत्तरकाण्ड है अर्थात् सभी की उत्तर अर्थात् पश्चातवर्ती स्थिति बनती है। ल्योतार के अनुसार उत्तर-आधुनिकतावाद पद उन्नीसवीं शताब्दी के बाद उस सांस्कृतिक अवस्था के बहुत से परिवर्तनों के फलस्वरूप बना। सांस्कृतिक अवस्था ने विज्ञान, साहित्य और कलाओं के लिए जो लोग अंतिम खेल नियम मान रहे थे, आधुनिकतावाद ने उनकी मान्यता को पलट दिया है। इस आधार पर ल्योतार ने उत्तर-आधुनिक युग को आधुनिकता की शिथिलता का योग कहा है। जिन दिनों अति आधुनिक समाजों जैसे सोवियत समाज के गिरते चले जाने की भविष्यवाणी हो रही थी, उन दिनों इन समाजों ने उत्तर-आधुनिक स्थितियों को ही अस्त-व्यस्त किया था।

वर्तमान में उत्तर-आधुनिकतावाद को पहचानने की आवश्यकता पर बल देते हुए **डॉ. सुधीश पचौरी** ने लिखा है—“उत्तर-आधुनिकता के लक्षणों को पहचानने के लिए उपलब्ध ज्ञान व्यवस्था की पड़ताल जरूरी है।



नोट्स

ज्ञान की अवस्था दो प्रक्रियाओं पर निर्भर है—वैज्ञानिक प्रक्रिया और वृत्तांत प्रक्रिया। ल्योतार कहते हैं कि वैज्ञानिक ज्ञान एक प्रकार का विमर्श (डिस्कोर्स) है और जब तक यह विमर्श है, वह भाषा पर निर्भर है।

नोट

पिछले चालीस-पचास सालों से विज्ञान अपने को खोलने के लिए लगातार भाषा के सिद्धांतों में फँसा रहा है, यह संचार, साइबर नैटवर्क्स, गणित, कम्प्यूटर, उनकी भाषा, अनुवाद की समस्या, सूचना संग्रह और आँकड़ा बैंकों पर निर्भर है।”

अर्नेस्ट मैडेल ने एक पुस्तक की रचना की है, जिसका नाम ‘लेट कैपीटलिज्म’ है। इसका अर्थ है—नवपूँजीवादी। इसमें लेखक ने तकनीकी संचय तथा विज्ञान संचय को ही विकसित देशों के द्वारा बनायी गई उपभोक्तावादी संस्कृति के मूल में माना है। तात्पर्य यह है कि विज्ञान के संचय ने ही उपभोक्तावादी संस्कृति को जन्म दिया है। उनके अनुसार विज्ञान का संचय ही नवपूँजीवाद की व्यवस्था का भी कारण बना है। यह साम्राज्यवाद की नयी व्यवस्था है। उपभोक्तावाद की इस अत्यधिक बढ़ी हुई स्थिति संग्रहवाद की पराकाष्ठा है। इस प्रकार विचार करें तो जान पड़ेगा कि उत्तर-आधुनिकतावादी ल्योतार ने सबसे अधिक प्रकार से प्रहार किए हैं। उत्तर-आधुनिकतावाद ने आधुनिकता पर तो प्रहार किया ही है, इसके अतिरिक्त आधुनिकता के नए क्रम में जो सौंदर्य, शांति और विराट से संबंधित संकल्पनाएँ आती हैं, उत्तर-आधुनिकतावाद ने उन पर संदेह किया है। रामायण, महाभारत, बाइबिल आदि के जो महावृत्तांत हैं, उन पर भी प्रश्नचिह्न लगा दिया है।

उत्तर-आधुनिकता के विषय में अमेरिकी विचार—अमेरिका के जो विचारक हैं, उन्होंने उत्तर-आधुनिकता के संबंध में अनेक प्रकार के विचार किए हैं तथा उनके विश्लेषण का प्रयत्न भी किया है। उत्तर-आधुनिकता के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए अमेरिकी विचारकों ने अनेक प्रश्नों को सामने रखा है। उन प्रश्नों में से एक यह भी है कि क्या उत्तर-आधुनिकता आधुनिकता से सर्वथा भिन्न है? क्या उत्तर-आधुनिकता आधुनिकता का अगला चरण है? तात्पर्य यह है कि क्या आधुनिकता ही विकसित होकर उत्तर-आधुनिकता बन जाती है। उत्तर-आधुनिकता उत्तर-संरचनावाद, उत्तर-प्रौद्योगिक आदि से कहाँ तक संबंध रखता है।

उत्तर-आधुनिकता अनेकों का दर्शन—यह वास्तविकता है कि उत्तर-आधुनिकतावाद किसी एक व्यक्ति का दर्शन नहीं है। तात्पर्य यह है कि उत्तर-आधुनिकतावाद की उद्भावना और व्याख्या एक विचारक का कार्य नहीं है। इसकी रूपरेखा अनेक विचारकों ने प्रस्तुत की है। इस कारण इसमें अनेक अंतर्विरोध उपस्थित हुए हैं। उत्तर-आधुनिकता वैसे एक निश्चित दर्शन है। अनेक विचारकों ने इसके विषय में अपनी-अपनी उद्भावनाएँ की हैं, जिनमें कुछ एक-दूसरे के अनुरूप हैं और कुछ एक-दूसरे से भिन्न हैं।

उदाहरण के लिए, वास्तुकला का क्षेत्र लिया जा सकता है। जब वास्तुकला के क्षेत्र में उत्तर-आधुनिकता का दर्शन प्रस्तुत किया गया तो उसमें आधुनिकतावादी शैली का नकार अथवा विरोध प्राप्त हुआ। तात्पर्य यह है कि उत्तर-आधुनिकता ने वास्तुकला की अंतर्राष्ट्रीय शैली का विरोध किया। राबर्ट बेंतुरी और जेम्स स्टर्लिंग की जो रचनाएँ हैं, उनमें वास्तुकला की अंतर्राष्ट्रीय शैली का विरोध देखा जा सकता है। इस आधार पर वास्तुकला के विद्वानों और विचारकों में उत्तर-आधुनिकता को मृत घोषित कर दिया गया फ्रांस के उत्तर-संरचनावादियों ने उत्तर-आधुनिकतावाद को वास्तुकला की अंतर्राष्ट्रीय शैली के अनुकूल बताया। देल्युज देरिदा और माइकेल फुको ने उत्तर-संरचनावाद की जो स्थितियाँ बतायी थीं, वे सब उत्तर-आधुनिकतावाद में भी जीवन्त बताई गई हैं। वैसे बीसवीं शताब्दी के फ्रांसीसी और अमेरिकी विचारक अनेक अर्थों में एक-दूसरे के विरोधी थे, पर उत्तर-आधुनिकतावाद के विषय में एक-दूसरे के समीप आये। दोनों ने मानव जगत के यथार्थ को विखंडित करके उसमें परस्पर विरोधी, विजातीय और अनेकता की बात कही। उनके अनुसार मानव यथार्थ, निश्चित, अंतिम और विकल्पहीन नहीं है। वह परिवर्तनशील रहा है और रहेगा।

आधुनिकतावाद के विषय में कहा गया है किसी भी क्षेत्र में आधुनिकतावाद अंतिम धारण नहीं है। समाज ही नहीं, उसका विकास भी परिवर्तित होता रहता है, क्योंकि परिवर्तनशीलता उसका स्वभाव है। यदि समाज परिवर्तनशील है

नोट

तो उस पर आधारित कला, दर्शन, प्रौद्योगिकी आदि का भी विकास होगा, ये एक दशा में नहीं रह सकते। आधुनिकतावादियों ने इन स्थितियों को भलीभाँति नहीं समझा। ल्योतार और बौद्रिदा ने यह चर्चा सदा की है कि पश्चिम के आधुनिकतावादी जीवन में परिवर्तन संभव है।

उत्तर-आधुनिकतावाद आधुनिकतावाद का अगला चरण—उत्तर-आधुनिकतावाद वास्तव में आधुनिकतावाद की अगली स्थिति है, उसका अगला चरण है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि आधुनिकतावाद ने ही उत्तर-आधुनिकतावाद को जन्म दिया है। आधुनिकतावाद उत्तर-आधुनिकतावाद का जन्मदाता होकर भी उससे भिन्न है। तात्पर्य यह है कि आधुनिकतावाद और उत्तर-आधुनिकतावाद में परस्पर किसी भी प्रकार की समानता नहीं है।

उत्तर-आधुनिकतावाद और भारत—उत्तर-आधुनिकतावाद का संबंध पश्चिम की जीवन शैली और वहाँ के साहित्य से है। भारतवर्ष का साहित्य और भारतीय जीवन-शैली तो आधुनिकतावाद को ही ठीक से नहीं अपना सकी है तो उत्तर-आधुनिकतावाद तो भारतवर्ष के लिए भविष्य की और बहुत दूर की बात है। भारतवर्ष का साहित्य उत्तर-आधुनिकतावाद से अभी आक्रांत नहीं है। कभी-कभी भारतीय साहित्य में इसकी चर्चा होने लगती है जो एक प्रकार की अनुगूँज है। यदि हिंदी साहित्य की बात की जाए तो इसमें अभी तक आधुनिकता ने ही प्रवेश नहीं किया है, उत्तर-आधुनिकतावाद अभी हिंदी के लिए दूर की मंजिल है। संरचना, संरचनावाद और उत्तर-संरचनावाद भी हिंदी आलोचना में चर्चा के विषय बन सके हैं। इन वादों अथवा विचारधाराओं के आधार पर अभी हिंदी में गद्य या पद्य साहित्य की रचना नहीं हो रही है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State whether the following statements are True or False) :

7. 'लेट कैपीटलिज्म' के लेखक अर्नेस्ट मेंटल हैं।
8. आधुनिकतावाद का जन्म ल्योतार ने किया है।
9. उत्तर-आधुनिकतावाद वास्तव में आधुनिकतावाद का अगला चरण है।

5.3 सारांश (Summary)

- आधुनिकता एक सतत् प्रक्रिया है जिसमें निरंतरता का गुण विद्यमान है। आधुनिकता एक दृष्टि है जिसे नपे-तुले शब्दों में नहीं बांधा जा सकता है।
- आधुनिकता एक प्रश्नाकुल मानसिकता है जो हर बंधी-बंधाई व्यवस्था, मर्यादा या धारणा को तोड़ती है।
- 'उत्तर-आधुनिकता' को पश्चिमी समाज में प्रचलित समलैंगिकता और कमेरी अविवाहित अकेली स्त्रियों में देखते हैं। कई उसे बाजार और 'उपभोक्ता संस्कृति' का पर्याय कहते हैं।
- भारत में अधिकांश विचारक उत्तर-आधुनिकतावाद को या तो समझ नहीं पाये हैं अथवा गलत समझ रहे हैं।
- उत्तर-आधुनिकता विशेषणहीन वृत्तांत की पक्षधर है। महावृत्तांतों (रामायण, महाभारत, बाइबिल आदि) का नकार उसका मूल मंत्र है। उत्तर-आधुनिकता मूल्य मीमांसा को भी नकारती है।
- ल्योतार ने विकसित समाजों में तकनीकी स्थितियों में चली आ रही अवधारणा को अवैध सिद्ध किया है और बार-बार यह दिखाया है कि आधुनिकता की सीमाएँ हैं।
- अर्नेस्ट मेंटल ने एक पुस्तक की रचना की है, जिसका नाम 'लेट कैपीटलिज्म' है। इसका अर्थ है-नवपूँजीवादी। इसमें लेखक ने तकनीकी संचय तथा विज्ञान संचय को ही विकसित देशों के द्वारा बनायी गई उपभोक्तावादी संस्कृति के मूल में माना है।

- उत्तर-आधुनिकतावाद वास्तव में आधुनिकतावाद की अगली स्थिति है, उसका अगला चरण है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि आधुनिकतावाद ने ही उत्तर-आधुनिकतावाद को जन्म दिया है।

नोट

5.4 शब्दकोश (Keywords)

- संरचना : सूक्ष्म तत्व की बनावट, बनावट, रचना
- आक्रांत : जिस पर हमला किया गया हो, पराभूत, अभिभूत

5.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. आधुनिकता के मूल तत्वों का वर्णन कीजिए।
2. आधुनिकतावाद क्या है?
3. उत्तर-आधुनिकतावाद के दर्शन को समझाइए।
4. आधुनिकतावाद एवं उत्तर-आधुनिकतावाद में अंतर स्पष्ट कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer : Self Assessment)

- | | | | |
|-----------|-------------|---------------------------|---------|
| 1. आधुनिक | 2. मानसिकता | 3. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल | 4. (स) |
| 5. (ब) | 6. (स) | 7. सत्य | 8. सत्य |
| 9. सत्य। | | | |

5.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)



- पुस्तकें
1. नई समीक्षा के प्रतिमान – निर्मला जैन।
 2. समीक्षालोक – भागीरथ दीक्षित।